सिल्वर फोडर

(गुदडी के लाल–2)

फिरोज अर्दलान

सिल्वर फोडर

(गुदडी के लाल–2)

(फिरोज अर्दलान (फिजी) द्वारा अँग्रेजी में लिखी गई
मूल पुस्तक 'सिल्वर फोडर' का हिंदी अनुवाद)

अनुवादक
सुबोध जोशी

संपादक
मांगू सिंह रावत

सेवा मन्दिर

जगत एस मेहता को समर्पित

मेरे एक सच्चे प्रेरणास्रोत

उन महानतम लीडर्स में से एक जिन्हें मैं जानता हूँ या कभी जानूँगा

उन्हें अपना दोस्त कहने का सौभाग्य पाकर मैं खुद को सम्मानित महसूस करता हूँ

खेरवाड़ा
स्वरूपगंज
गरणवास
कोटड़ा

अनुक्रमणिका

i प्रस्तावना

ii भूमिका

iii आभार

1. रास्ता
2. ड्राइविंग सीखना
3. घिसी बाई
4. मोटरसाइकिल, जीप, ट्रक और बस
5. कालूलाल गमेती
6. ''अगम्य'' रास्ता
7. मणी देवी
8. शांत बने रहना
9. कंकू बाई
10. रचनात्मकता के अवसर
11. केशुलाल खेर
12. पथरीले रास्ते
13. हाकर चंद
14. टूट जाना
15. रमेश मीणा
16. आत्मविश्वासी ड्राइवर
17. जेलकी बाई
18. रास्ते का महत्व
19. लिम्बा राम

प्रस्तावना

सेवा मंदिर द्वारा उदयपुर के आसपास के गाँवों और छोटी बस्तियों में रहने वाले समाज के अत्यधिक वंचित लोगों के जीवन में सामाजिक बदलाव और आर्थिक सुधार लाने के लिए जो प्रयास किए जाते हैं, उनमें शामिल होने के लिए बहुत से स्वैच्छिक कार्यकर्ता (वॉलंटियर) सेवा मंदिर से जुड़ते हैं। फिरोज अर्दलान (फिजी) भी ऐसे ही आदर्शवादियों में से एक थे जो थोड़े समय के लिए सेवा मंदिर के साथ कार्य करने के लिए आए थे।

यहाँ आने से पहले ही एक अच्छे लेखक के रूप में उनकी ख्याति फैल चुकी थी और इसी कारण सेवा मंदिर ने उनसे जमीनी स्तर के लीडर्स के जीवन और उनके संघर्षों के बारे में लिखने का अनुरोध किया। एक दशक पहले इस तरह की एक अन्य पुस्तक अँग्रेजी में लिखी जा चुकी थी और उसका हिंदी अनुवाद भी किया गया था। नंदिता रॉय द्वारा "द वेस्टलैंड थ्रु द मेकिंग ऑफ ग्रासरूट्स लीडर्स'' शीर्षक से लिखी गयी। यह पुस्तक स्थानीय लोगों के साथ बाहर के लोगों द्वारा भी बहुत अधिक सराही गयी है। फिजी से कुछ इसी तरह के कार्य का अनुरोध करना न्यायोचित नहीं था क्योंकि वे हिंदी नहीं जानते थे, और जल्दी ही उन्हें यह समझ भी आ गया कि इस कार्य को अंजाम देने के लिए वे पूरी तरह दूसरों पर निर्भर थे।

लेकिन हाथ में लिया गया काम छोड़ कर भाग खड़े होने के बजाय फिजी ने एक अलग तरीके से लिखने का साहसिक निर्णय लिया। उन्हें अपनी लाचारी का जो अहसास हुआ उसने एक ऐसे झरोंखे का काम किया जिसके माध्यम से वे उन लोगों के जीवन में झाँक सके जो दूसरी तरह से लाचारियाँ झेलने को मजबूर थे, जैसे – अत्यधिक गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा एवं आजीविका के स्थायी साधनों तक पहुँच का अभाव, अत्याचारी संरक्षकों पर निर्भरता के कारण गरिमा का हनन चुप रह कर सहन करना। उन्होंने निश्चय किया कि वे गाँव वालों के जीवन के बारे में लिखेंगे और साथ–साथ यहाँ के जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करने की अपनी आंतरिक यात्रा के बारे में भी लिखेंगे जो उस जीवन से बहुत अलग था जिसमें वे पले–बढ़े थे।

फिजी द्वारा प्रस्तुत इस विवरण में ऐसे अनेक व्यक्तियों की आवाज की गूँज है जो उन्हीं की तरह वैश्विक नागरिक बनने का प्रयास करते हैं, जो उन लोगों के

जीवन को समझना चाहते हैं जिनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार हो रहा है और बेहतर जीवन की उनकी खोज में शामिल भी हैं। इसमें गाँव वालों की आवाज भी सुनाई देगी। फिजी के लेखन और विचारों में गाँव वालों को आत्मसम्मान और न्याय के लिए उनके संघर्ष के लिए सच्ची सराहना और अंतर्दृष्टि दिखाई देगी। साथ ही समाज का दमनकारी ढाँचा बनाए रखने में अपनी खुद की सहभागिता समाप्त करने की चुनौती के बारे में गाँव वालों की आत्म–विश्लेषणपूर्ण सोच भी फिजी के लेखन में उभर कर सामने आती है। फिजी यह भी बताते हैं कि किस तरह जो चीजें एक मनुष्य को दूसरे से अलग करती हैं वही चीजें साझा गंभीर मसलों में सभी के लिए एक बेहतर भविष्य के निर्माण के लिए सेतु का काम कर सकती हैं, जैसे – वर्ग, लिंग, भाषा और राष्ट्रीयता।

यह पुस्तक लिखना आसान नहीं था। इसमें फिजी के जीवन के दो से अधिक साल लग गए जबकि वे सिर्फ छः महीनों के लिए यहाँ आए थे। इसे पूरा करने में इतना लम्बा वक्त सिर्फ भौतिक कठिनाइयों, जैसे – भाषा नहीं जानना और जिनसे भेंट करना थी उनका दूर दराज के गाँवों में रहना, के कारण नहीं लगा बल्कि फिजी की सच तलाशने की चाह में ज्यादा लगा। महज एक पुस्तक लिखने से अधिक वे वंचित लोगों के बारे में दुनिया का दृष्टिकोण समझना चाहते थे, उनकी आनंदित होने की क्षमता, उनके नैतिक–राजनीतिक कार्यकलाप और जटिल विचार के साथ–साथ अस्तित्व बनाए रखने के दबाव में उनका पथभ्रष्ट हो जाना।

फिजी की व्यक्तिगत यात्रा और विचारों में दुनिया भर के युवक एक बेहतर साझा भविष्य की दिशा में कार्य करने और योगदान देने के अपने संघर्षों की कुछ झलक पाएँगे।

अजय एस. मेहता
अध्यक्ष, सेवा मंदिर

भूमिका

पुस्तक लिखने की यह परियोजना 2003 में नंदिता रॉय द्वारा लिखी गयी एक पुस्तक "द वेस्टलैंड रू द मेकिंग ऑफ ग्रासरूट्स लीडर्स'' के अनुसरण में आरंभ हुई। उनकी पुस्तक की तरह ही इस पुस्तक में भी जिन लीडर्स से चर्चा की गयी है वे सभी उम्मेदमल लोढ़ा अवार्ड से सम्मानित हैं। भौतिक संसाधनों के संरक्षण और सामुदायिक विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने वाले व्यक्तियों के कार्य को प्रोत्साहन एवं सार्वजनिक रूप से मान्यता प्रदान करने के उद्देश्य से उम्मेदमल लोढ़ा अवार्ड प्रदान किए जाते हैं। इस संदर्भ में उन सब में कुछ एक जैसी खूबियाँ हैं लेकिन फिर भी लीडर्स के रूप में उनकी अपनी–अपनी व्यक्तिगत और अनूठी विशिष्टताएँ हैं जिनके कारण उन सभी की भिन्नताओं का परीक्षण भी उतना ही महत्वपूर्ण हो जाता है जितना उनकी समानताओं का। "लीडर्स में क्या समानताएँ हैं?'' और, "वह क्या है जो कुछ लीडर्स को दूसरों से बनाता है?'' यह महत्वपूर्ण और व्यावहारिक प्रश्न मेरे शोध कार्य के मार्गदर्शक हैं।

ना तो मैं भौतिक संसाधनों के क्षेत्र में विशेषज्ञ हूँ और ना ही लीडरशिप के क्षेत्र में। इसके अलावा, मैं एक विदेशी स्वैच्छिक कार्यकर्ता (वॉलंटियर) हूँ जो भारत में नहीं जन्मा है या हिंदी से वाकिफ नहीं है। कोई यह पूछ सकता है, और वह सही भी होगा, कि शोध कार्य करने, इंटरव्यू लेने और क्षेत्र में जमीनी स्तर के लीडर्स के बारे में लिखने के लिए मुझे क्यों चुना गया। अक्सर मैं भी अपनी भूमिका समझने की कोशिश करता हूँ और यह सोचता हूँ कि इस साहसिक कार्य को करने किए कौन सा तरीका सर्वश्रेष्ठ होगा। यह कहने वाला सबसे पहला व्यक्ति मैं रहूँगा कि यह मेरे लिए कोई आसान काम नहीं था। कई बार मेरा मन हुआ, लेकिन ना जाने क्यों मैंने मैदान नहीं छोड़ा।

हालाँकि, यह परियोजना उन व्यक्तियों पर केंद्रित थी जिनके बारे में मैंने लिखा है, लेकिन मैंने प्रथम पुरुष में लिखने का निश्चय किया। मुझे यह लगा कि लीडर्स की यात्रा और एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता के रूप में मेरी अपनी यात्रा दोनों के अनुसन्धान का सर्वश्रेष्ठ तरीका यह होगा कि इसे मैं अपनी बात के रूप में कहूँ। मेरा मानना है कि यह शोध कार्य मुझे एक विशिष्ट दृष्टिकोण सामने रखने की इजाजत देता है, लेकिन इसमें अपनी कमियों को नजरंदाज कर देना अनुचित होगा।

जब मैंने यह यात्रा आरंभ की तब मुझे ठीक से पता भी नहीं था कि मैं क्या चाहता

था या कहाँ से शुरुआत करूँ। जब मैं पहली बार सेवा मंदिर आया तब मैंने यह जानने में थोड़ा ही वक्त बिताया कि एक संगठन (संस्था) और समाज में एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता को क्या भूमिका निभानी होती है। मैं जानता था कि मेरे सामने विषम परिस्थितियों का अम्बार था। मैं हिंदी नहीं बोलता था और राजस्थान में उदयपुर में रह कर एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता के रूप में काम करने वाला था। मुझे एक नयी संस्कृति को समझना था और मुझे पूरा विश्वास था कि मैं यहाँ रह कर सौ साल शोध कार्य करूँ तो भी मैं इसे पूरी तरह नहीं समझ सकता। मैं विकास के क्षेत्र में अपनी अनुभव की कमी से बुरी तरह भयभीत था। मैं समझ चुका था कि एक बाहरी व्यक्ति होने कारण वे समुदाय जिनके साथ मुझे काम करना था और वे व्यक्ति जिनके इंटरव्यू मुझे लेने थे, हमेशा मुझ से दो कदम की दूरी बनाए रखेंगे। इस पुस्तक में जिनका जिक्र है और जिन्होंने मुझे यह पुस्तक लिखने की जिम्मेदारी दी उनके साथ अन्याय ना हो यह चिंता लगातार मुझे सताती रहती थी। एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता के रूप में मेरी अनभिज्ञता पर मेरी जिज्ञासा भारी पड़ी, लेकिन फिर भी मेरी उत्सुकता को मेरी सीमाओं ने काबू में रखा। हालाँकि, मेरा यह मानना है कि इस अंतर (खाई), इस असंबद्धता, एक छटपटाता हुआ व्यक्ति होने के कारण ही मुझे इस परियोजना का दायित्व लेने के लिए कहा गया होगा। यह चुनौती पाकर मैं खुद को बहुत सौभाग्यशाली मानने लगा क्योंकि सेवा मंदिर और भारत के लिए मेरे हृदय में बहुत प्रेम और प्रशंसा का भाव है। सेवा मंदिर एक ऐसा संगठन है जिसके पास बेहतरीन लीडर्स हैं और जो नैतिक मूल्यों का दृढ़ता से पालन करता है। विकास और सशक्तिकरण के प्रति इसका दृष्टिकोण अनूठा, पारदर्शी और प्रभावी है। सेवा मंदिर के लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में एक भूमिका निभाने का जो अवसर मुझे दिया गया उसके लिए मैं सेवा मंदिर का सदा आभारी रहूँगा।

शोध करने के लिए मैंने कई महीने क्षेत्र में बिताये और लगभग एक साल का वक्त लिखने में बिताया। यह जितनी बाहर देखने की यात्रा थी उतनी ही अपने अंदर झाँकने की यात्रा भी थी। पीछे मुड़कर देखने पर बहुत कुछ समझ आता है। मैं अक्सर सोचता हूँ और यह समझने की कोशिश करता हूँ कि क्या किसी और तरीके से भी मैं यह काम कर सकता था। मैं मानता हूँ कि कई बार काम की धीमी गति या मेरे प्रेरणाहीन होने के लिए मेरा मन अन्य कारणों को दोष देने का करता होगा। लेकिन, अंततः मुझे अहसास होता है कि अक्सर मेरी अपनी कमियाँ ही यह ठहराव ला देती थी। इसके साथ, इस यात्रा को धीमी, कभी–कभी मुश्किल भरी और अनिश्चिततापूर्ण बनाने में बाहरी कारणों का भी योगदान रहता था।

चूँकि मैं हिंदी बोलना नहीं जानता था इसलिए अपने सम्पूर्ण क्षेत्र के कार्य के लिए

मैं पूरी तरह एक अनुवादक पर निर्भर रहता था। इसके लिए कोई ऐसा व्यक्ति ढूँढना कोई असान काम नहीं था जो, संभवतया ग्रीष्मकालीन इंटर्नशिप में, मुझे जैसे एक अनजान जीव के लिए अनुवाद करने में समय बिताने के लिए राजी हो। साथ ही यह मुश्किल भी थी कि जितने भी लीडर्स के इंटरव्यू मुझे लेने थे वे खुद भी शुद्ध हिंदी बोलना नहीं जानते थे ! इसलिए यह जरूरी था कि मेरा अनुवादक ऐसा हो जिसकी स्थानीय बोलियों पर भी अच्छी पकड़ हो। सौभाग्य से, जून की एक चमचमाती दोपहर में मोनिका देओल नाम की कानून की एक युवा छात्रा मेरे ऑफिस में आयी और मेरे लिए अनुवादक की यह खोज पूरी हुई। हालाँकि, उनके साथ एक ही महीना काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, लेकिन वे मेरे काम को 3.9 सेकंड्स में 0 से 60 की गति पर पहुँचाने में सक्षम थी। बारिश के मौसम में क्षेत्र में जाना अधिक मुश्किल हो जाता है और किसानों से भेंट करना भी मुश्किल हो जाता है क्योंकि वे खेतों में काम करने में व्यस्त हो जाते हैं। मुझे सितम्बर में एक अन्य साथी के साथ दो महीने काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जो मेरा दोस्त होने के साथ सेवा मंदिर में कार्यरत था। उनका नाम अरुण पुजारी था। उनके साथ काम करने पर मुझे अहसास हुआ कि एक तो मैं कितना भटका हुआ था और दूसरा, अरुण का साथ होना मेरे लिए कितना जरूरी था। वे भौतिक संसाधन विभाग में कार्य करते थे और इस विषय में उनकी विशेषज्ञता ने ऐसी अनेक बातों को गहराई से समझने में वाकई मेरी मदद की जिन्हें समझने में मुझे मुश्किल हो रही थी।

हालाँकि, मैंने जिन लीडर्स के इंटरव्यू लिए उन्हें विशेष मापदंडों के आधार पर चुना गया था, मैं उम्मेदमल लोढ़ा अवार्ड्स के लिए अपनाई जाने वाली लीडरशिप की अवधारणा को मान कर इन व्यक्तियों के उदाहरण द्वारा उसे साबित करने का काम नहीं करना चाहता था। लीडरशिप के बारे में मैंने बहुत सी किताबें पढ़ी और सेवा मंदिर के अंदर और बाहर के बहुत से लोगों से लीडरशिप के बारे में चर्चाएँ की। इन चर्चाओं के दौरान और इनके बाद जल्दी ही जो बात मुझे समझ आयी वह यह थी कि ”लीडरशिप'' शब्द थोड़ा खीज उत्पन्न करने वाला हो सकता है। वास्तव में, मैंने इसका जितना अध्ययन किया, इसे उतना ही नापसंद करने लगा। सच यह है कि लीडरशिप जैसे एक खूबी है वैसे ही एक प्रक्रिया भी है। यह एक एकल व्यक्ति में मूर्त रूप ले सकती है या व्यक्तियों के एक पूरे समूह के उदाहरण से स्पष्ट हो सकती है। जिस तरह यह कुछ लोगों की एक जन्मजात खूबी हो सकती है वैसे ही यह एक कौशल भी है जो सिखाया और सीखा जा सकता है। जिस तरह यह संदर्भ आधारित हो सकती है वैसे ही यह सार्वभौमिक (सामान्य) भी हो सकती है। जिस तरह यह संस्कृति आधारित हो सकती है वैसे ही यह हमारे मनुष्यगत स्वभाव का अंग भी हो सकती है। साथ ही,

अपनी यात्रा में मैंने यह पाया कि एक लीडर अन्य किसी भी चीज के मुकाबले एक शिक्षक से ज्यादा मेल खाता है। कभी–कभी मैं आश्चर्य से सोचता हूँ कि क्या मेरे लिए यह बेहतर होता कि पहले मैं यह समझ लेता कि एक अच्छा शिक्षक कैसे निर्मित होता है, हालाँकि, मुझे नहीं लगता कि इस प्रश्न का उत्तर देना इतना आसान होगा।

मेरी खोज यह समझने के लिए थी कि क्यों कुछ विशेष व्यक्ति, जो समाज के कुछ सबसे दरकिनार वर्गों से आते हैं, अपनी चेतना और परोपकार की भावना से अपने समुदायों में कार्य करने में सक्षम होते हैं या कार्य करने की जरूरत महसूस करते हैं, जबकि उनके लिए अपने व्यक्तिगत हित को बढ़ावा देने की अपेक्षा सरल और अधिक लाभदायक तरीके उपलब्ध रहते हैं। जो व्यक्ति यह बताने में भी सक्षम नहीं है कि वह अपने परिवार का पेट भर पाएगा या नहीं, या शुद्ध पेय जल या उचित स्वास्थ्य सुरक्षा तक उसकी पहुँच होगी या नहीं वह व्यक्ति अपनी इन त्वरित आवश्यकताओं से कहीं अधिक बड़े मसलों पर ध्यान दे पाने में कैसे समर्थ होता है? वह क्या है जो इन व्यक्तियों को सामुदायिक सद्भाव के लिए और मन को अक्सर ललचाने वाले निरंकुश भ्रष्टाचार एवं जबरन हक छीनने जैसे अत्याचारों के खिलाफ कार्य करने की ऊर्जा देता है? आखिरकार, वह कौन से कारक हैं जो किसी व्यक्ति को अपना दर्जा बढ़ाने के लिए अपने साथी देशवासियों को पृथक कर देने के लिए प्रोत्साहित करते हैं? अक्सर क्यों ऐसा महसूस होता है कि इन सूखे और कभी–कभी निर्मम व्यवहार करने वाले इस देहात में इतने संघर्षों और कठिनाइयों से जूझ रहे यह पुरुष, महिलाएँ और बच्चे खुद अपने ही संघर्षों के मूक दर्शक और अपने शोषण को जारी रखने के माध्यम बन जाते हैं?

इस तरह के प्रश्न निरंतर मेरे अंतर्मन में उठते रहते थे, कुछ प्रश्न दूसरे प्रश्नों से ज्यादा सोचने में आते थे। लोगों को समझने और लिखने के लिए मुझे जो विषय दिया गया था उससे संबंधित मेरी खोज में यह प्रश्न उपयोगी मार्गदर्शक सिद्ध हुए। मेरी रूचि उन व्यक्तियों में थी जिन्होंने महज दर्शक बने रहने से इंकार किया, नतीजों की परवाह किए बगैर आत्मसंतोष के लिए लड़ाई लड़ी और अपने समुदाय की सोच (धारणा) को बदल डाला, और यही वे लोग हैं जिन्होंने दर्शकों को ऐसे दृश्य में परिवर्तित कर दिया जिसके बारे में और अधिक जानने के लिए मैं आया हूँ।

–फिरोज अर्दलान

आभार

अपने हृदय की अंतरिम गहराई से मैं नीलिमा जी, अजय, प्रियंका जी, शैलेन्द्र, अरुण, मोनिका, आंद्रे और शेरी बुचानन के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ। मैं उन सभी व्यक्तियों के प्रति भी हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ रास्ते में जिनके सहयोग, धैर्य, सहृदयता और मार्गदर्शन से इस पुस्तक की रचना संभव हुई......... आप लोग जानते हैं आप कौन हैं !

अंत में, विशेष रूप से मैं सभी लीडर्स के प्रति तहेदिल से अपना आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक की रचना में सहर्ष भाग लिया, मुझे बेशकीमती सीख दी और जिनके लिए यह पुस्तक लिखी गयी है।

फिरोज अर्दलान

रास्ता

क्षेत्र की ओर जाने वाला रास्ता राहगीर के लिए अपने आप में अनेक संभावनाएँ लिए हुए है। रास्ता सुकून भरा होगा या यह किसी हद तक आत्मघाती साबित होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप किस वक्त उस रास्ते से गुजर रहे हैं। वह काफी भीड़ भरा, खतरनाक, खूबसूरत, माफ नहीं करने वाला, गर्मजोशी से भरा कुछ भी हो सकता है। वह कभी भट्टी की तरह गर्म, कभी जमा देने जैसा बेहद सर्द, अनियंत्रित, विवेकहीन, तर्कपूर्ण, संवेदनशील, नर्म, कठोर या और भी कई तरह के अनगिनत विरोधाभास अपने में समेटे हो सकता है। शांत समय में ऐसे संकड़े रास्ते से गाड़ी चलाते, घुमावदार पहाड़ी रास्ते के उतार–चढ़ावों से गुजरते वक्त बार–बार मेरा मन करता है कि खिड़की से बाहर निकल कर उस सौम्य भौतिक छवि की पीठ थपथपा कर सराहना करूँ। उस रहस्यमय स्थान के प्रति मन को अभिभूत कर देने वाले आश्चर्य, प्रशंसा और कुछ उदासी के मिले जुले भावों को शांत करने के लिए खिड़की के बाहर की उस दुनिया को छूने की लालसा मन में उठती थी। सुनहरी घास के धागों से बुनी पोषक ओढ़े खड़ा यह अनंत प्रतीत होने वाला विशाल घुमावदार पहाड़ी भू–दृश्य किसी दिव्य परियों की कहानी के लिए तैयार किये गये मनमोहक दृश्य जैसा लगता है। कम ही लोग हैं जिन्हें इस दृश्य को देखने का सौभाग्य मिला और उनमें से भी गिनेचुने लोग ही हैं जो इस पर मनन–चिंतन के लिए वक्त निकालते हैं और संभव है क्षेत्र की ओर जाने वाले इन रास्तों के माध्यम से उन लोगों को यह अहसास दिलाना चाहती हो कि रास्ते के यह उतार–चढ़ाव वास्तव में छुपा हुआ एक ऐसा वरदान है जो अंधाधुंध आधुनिकीकरण और तर्कहीन परंपरा के खतरों से इस स्थान की रक्षा करता है।

इस इलाके में मैंने सार्वजनिक और निजी जीपों, बसों, मोटरसाइकिलों, स्कुटीयों, रिक्शों और साइकिलों से यात्रा की है। राजस्थान की भीषण गर्मी में ठसाठस भरी बस में मैंने शिथिल (सुन्न) कर देने वाली उस गर्मी का अनुभव झेला है जिसमें साँस लेने के लिए हवा पाने के प्रत्येक मौके के लिए मैं वाकई तड़पा हूँ। मैं कई बार सड़क पर दौड़ती जीपों के ऊपर बैठकर गया हूँ और खतरनाक मोड़ों पर झटके लगने पर जैसे–तैसे अपना जीवन बचाया, सूखी नदी के झुलसा देने वाले किनारों पर बहादुरी से पैदल चला हूँ। जीपों में पीछे कीचड़ में सनी बकरियों के साथ बैठा हूँ जो मेरे पैरों में बड़ी मुश्किल से बैठी होती थी और मेरे

पंजों को कतरती थी। मैंने सवारियों से ठसाठस भरी ऐसी बसें देखी हैं जिनकी छतों पर लोग बैठे होते थे और उनसे कई लोग लटके भी रहते थे और यह देखकर मेरा दिल एकाध धड़कन वाकई चूक जाता था। कहने में शर्म महसूस होती है, मगर आपको यह स्वीकारना ही होता है और कुछ समय बाद दूसरों की तरह आप भी अपने पास से गुजरती ऐसी बसों पर ध्यान देना ही बंद कर देते हैं। जल्दी ही आपको यह एहसास हो जाता है कि यह इस रास्ते की सच्चाई है। ड्राइवर जहाज के उन कप्तानों की तरह लगने लगते हैं जो समंदर की बेरहम उफनती लहरों में जहाज को सही दिशा में ले जाने के लिए सतत् संघर्ष करते हैं। कई बार यह सोचते हुए मुझे लाइफ जैकेट की जरूरत महसूस हुई कि ''अब किसी भी क्षण हमारा जहाज तबाह हो सकता है''। उसके बाद....... चुप्पी। गाड़ी के ब्रेक की चीखें। किसी भी तरह से खतरे को टालना। दिल का धड़कना। मुस्कुराना। चुप्पी।

कई बार ऐसा लगा जैसे क्षेत्र की ओर जाने वाला रास्ता ऐसा है जिसका आनंद लेना तो दूर बल्कि उससे सुरक्षित निकल जाना ही अपने आप में एक चुनौती है। हालाँकि खुद को बड़ी खूबसूरती से शांत बताने में ड्राइवर को भी पसीने आते होंगे, लेकिन प्रत्येक अवसर पर सड़क की हदों को पार कर जाने की उसकी अतृप्त इच्छा हमेशा यात्रियों को यह भरोसा नहीं दिलाती कि वह भी जीवन के प्रति उन्हीं की तरह संवेदनशील है। फिर भी भली–भाँति सफलता से पूरे किए गए अन्य किसी रास्ते की तरह आप उसकी बारीकियों, पेचीदगियों, खूबसूरतियों और खतरों से परिचित हो जाते हैं। जैसे–जैसे आप रास्ते से परिचित होते चले जाते हैं उसकी मुश्किलें आपकी चिंता के रडार पर उठने वाली निरर्थक तरंगों से अधिक अर्थ नहीं रखती।

एक बार आप क्षेत्र में पहुँच जाएँ तो आप निश्चित ही प्रेरित करने देने वाली ऐसी कहानियों से रूबरू होंगे जो आपको अचंभित करते हुए आप में आशा का संचार कर देंगी, या फिर आप हृदय विदारक सच्चाइयों से भी वाकिफ हो सकते हैं। शायद आपको लगे कि बोरियत आप की ओर मित्रता का हाथ बढ़ा रही है या फिर कोई अनपेक्षित साहसिक कार्य आपकी भुजाओं को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। शायद एक मात्र निश्चितता यही है कि जो कार्य पूर्ण करने आप निकले हैं, उसे करने के दौरान पहले से सोची गई कार्य प्रणाली में कुछ ना कुछ रचनात्मक परिवर्तन करने की परिस्थिति जरूर पैदा हो जाए।

सेवा मंदिर स्थानीय स्तर पर संचालित एक गैर—सरकारी संगठन (एनजीओ) है। यह उत्तर—पश्चिम भारत में स्थित राजस्थान राज्य के उदयपुर और राजसमंद जिलों के ग्रामीण क्षेत्र में सक्रिय है। एक एनजीओ के रूप में यह सतत आजीविका, व्यक्तिगत क्षमताओं और स्थानीय ग्रामीण संस्थाओं को बढ़ावा देने एवं उनके सशक्तिकरण की दिशा में ध्यान केंद्रित कर रहा है। एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता (वॉलंटियर) के रूप में मैंने इस एनजीओ के शिक्षा, स्वास्थ्य और भौतिक संसाधन विभागों में कार्य किया। युवाओं में विश्वास जगाने और मूक—बधिर बच्चों को शिक्षा देने के काम में सहयोग के साथ मैंने अपने कार्य की शुरुआत की और आगे चलकर मुझे ''जमीनी स्तर पर नेतृत्व (लीडरशिप)'' विषय पर अनुसंधान कार्य करने का निर्देश प्राप्त हुआ।

जिन इलाकों में मैं कार्य कर रहा था वह कैसे थे यह एहसास दिलाने के लिए मैं संक्षेप में झाडोल का वर्णन जरूर करना चाहूँगा। यह उन प्रखण्ड़ों (अनेक गाँवों से मिलकर बने एक जिले की एक प्रशासनिक उप—इकाई) में से एक था जिनमें मैंने काम किया। हालाँकि अनेक मायनों में यह एक औसत प्रखण्ड़ ही है, फिर भी हर एक प्रखण्ड़ अपने आप में दूसरे प्रखण्ड़ों से किसी ना किसी तरह अलग होता है।

झाडोल अरावली पर्वत माला के दक्षिण—पश्चिमी भाग में 144100 हेक्टेयर में फैला एक सुंदर भू—भाग है। इसकी जनसंख्या, जिसमें अधिकांश भील समुदाय हैं, 200000 से कुछ ही कम है। मोटे तौर पर यहाँ कुल जनसंख्या का 46: साक्षर या शिक्षित है जो उससे सटे प्रखण्ड़ों की तुलना में अधिक है, हालाँकि यह अब भी राष्ट्रीय साक्षरता औसत से कम है जो लगभग 60: है। आज से तीस वर्ष पहले यह पूरा इलाका अपेक्षाकृत अधिक घना और अनछुआ जंगल रहा होगा जिसमें जंगली जानवर जैसे तेंदुए, बाघ और गिद्ध भरे पड़े होंगे। लेकिन जिस आश्चर्यजनक तेजी से यहाँ वृक्षों की कटाई हुई है उसने यहाँ के जंगलों को नष्ट कर दिया है। भील समुदाय इन जंगलों में पीढ़ी दर पीढ़ी रहते आए हैं। आर्यों के आने या इस इलाके में हिंदुत्व की स्थापना से बहुत पहले ही उन्होंने अपनी जड़ें इस भूमि में जमा ली थी। भील, जो शिकार करने और अपनी सामूहिक प्रथाओं या रीति—रिवाजों के लिए जाने जाते हैं, अपनी आजीविका के लिए इन जंगलों और अन्य भौतिक संसाधनों पर निर्भर थे।

ऐतिहासिक दृष्टि से, रियासतों और धनी भू—मालिकों ने बलपूर्वक इस इलाके में

अपना नियंत्रण बनाए रखा, हालाँकि गाँव के लोग अपनी आजीविका की पूर्ति के लिए जंगलों से विभिन्न प्रकार के उत्पादन एकत्र करने में समर्थ थे। भारत को सन 1947 में अँग्रेजों से आजादी मिलने के बाद गाँव वालों और बड़ी संख्या में दूसरे लोगों के लिए जंगलों में आना–जाना अधिक आसान हो गया। हरे–भरे जंगल शासन के लिए भी राजस्व प्राप्त करने के अच्छे स्रोत बन गए। भूमि के रखवालों और मालिकों के विषय में किसी सुपरिभाषित व्यवस्था के बगैर और, इससे भी अधिक, समुचित प्रशासनिक तंत्र के अभाव, अंधाधुंध दोहन और बढ़ते लालच के कारण यहाँ के बहुमूल्य भौतिक संसाधनों को बहुत नुकसान पहुँचा।

वर्तमान समय में यहाँ अधिकांश परिवार खेती, पशुपालन और मजदूरी के मिश्रण से अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। चूँकि आजीविका के पारंपरिक स्रोतों की उपयोगिता कम होती जा रही है इसलिए परिवार अब और अधिक समय गाँवों में रहकर किसानों के रूप में काम करते हुए जीवनयापन करने में समर्थ नहीं हैं। प्रतिदिन झाडोल के गाँवों से लोग काम की तलाश में उदयपुर पलायन कर रहे हैं। पलायन बहुत अधिक बढ़ कर अपने आप में एक बड़ी समस्या बन गया है और समुदायों के लिए अनेक तरह के खतरे उत्पन्न कर रहा है। यह उन बच्चों के विषय में विशेष रूप से देखा जा सकता है जो नौ या दस वर्ष की छोटी उम्र में ऐसे जोखिम भरे कामों की तलाश में बार–बार बड़े शहरों की ओर जाने को मजबूर हैं जिनमें से अधिकांश में उनका शोषण भी होता है।

रास्ते में मैं इन मुद्दों पर विचार करता और साथ ही इस भू–विस्तार के संरक्षण में अपनी भूमिका के विषय में मनन चिंतन करता रहता था जो मेरे यहाँ आने के अनेक कारणों में से एक था। खचाखच भरी अंधे मोड़ों से गुजरती तेज दौड़ती बसों में, या एक मोटरसाइकिल पर चार–पाँच लोगों के साथ बैठकर यात्रा करना, जिसमें कभी–कभार घने अँधेरे में नियन्त्रण खोकर सड़क के बाजू में फिसल कर गिरे भी। इन सभी ने मुझे सोचने पर मजबूर किया कि इस कार्य का क्या महत्त्व है। दूसरों की सेवा में अपना जीवन समर्पित करने वाले जिन लोगों के साथ मैंने काम किया उन पुरुषों और स्त्रियों के बारे में सोचने पर मुझे यह लगता है कि इनमें से हर एक ऐसा हीरो है जिसकी कहानी जानने योग्य है।

मन में यह विचार अक्सर ढ़लती शाम के वक्त उमड़ा करते थे जब रात के आगोश में समाने के लिए पश्चिमी पहाड़ियों के पीछे ढ़लते सूरज की आखरी किरणों में संध्या का आवरण ओढ़ते सुंदर भू–दृश्य से सजी धरती दिन की

आखरी निर्मल आभा बिखेर रही होती थी। यह रास्ता किसी ना किसी तरह मुझे यह एहसास दिलाने में मददगार है कि इन सब दुःखों और तकलिफों से परे, लोगों द्वारा सही जा रही असमानताओं और अन्याय से परे, एक उम्मीद जिंदा है। मन को सम्मोहित करने वाला यह एहसास शायद कार की हलचल या इंजन की हल्की घड़—घड़ाहट से पैदा होता होगा क्योंकि यात्रा के दौरान मेरे पास सोचने, बीते वक्त में झाँकने, भविष्य की कल्पना करने, खुद से प्रश्न करने और सोचने का वक्त होता था। मगर यह विचार जहाँ कहीं भी उठे हों, प्रत्येक क्षण याद रखने योग्य है।

क्षेत्र की ओर जाने वाले अलग—अलग रास्तों की बदौलत धीरे धीरे मुझे अपनी यात्रा का महत्व समझ आने लगा। उदयपुर और राजसमंद के सुषुप्त समुदायों में बहुत से नायाब हीरे छुपे हुए हैं। यहाँ ऐसे अनेक स्त्री—पुरुष हैं जो अपने परिवारों और समुदायों के लिए वाकई प्रेरणास्रोत हैं और संभवतः वे सारी दुनिया के लिए भी प्रेरणास्रोत साबित हो सकते हैं। मैं यहाँ ऐसे लोगों के बारे में खोजबीन करने आया हूँ जो पर्यावरण संरक्षण, आजीविका सुधार, और ग्रामीण समुदायों के सशक्तिकरण के क्षेत्र में अपने बेहतरीन काम के लिए जाने जाते हैं। मैं दक्षिणी राजस्थान की घुमावदार पहाड़ियों में रहने वाले जमीनी स्तर से जुड़े उन महत्वपूर्ण लीडर्स से बातचीत करने, उनसे सीखने और उनके कुछ संघर्षों तथा उपलब्धियों का लेखा—जोखा तैयार करने के लिए यहाँ आया हूँ ताकि समाज में उनके योगदान को पहचान कर उनकी सफलता की कहानियाँ सबके सामने लायी जा सके जिनसे दूसरों को मार्गदर्शन और शिक्षा मिल सके और प्रेरणा पाकर किसी दिन वे भी अपने समुदायों की सहायता कर सकें।

ड्राइविंग सीखना

भारत में अपने प्रवास के दौरान जो सबसे डरावना काम मैंने किया वह था मोटरसाइकिल चलाना सीखना। भारत आने से पहले मैं कभी मोटरसाइकिल पर नहीं बैठा था, इसलिए जब मैं वहाँ था मेरे एक अच्छे दोस्त ने मुझे सिखाया कि मोटरसाइकिल कैसे चलाई जाती है? मैंने एक ऐसे खाली तालाब में यह सीखा जो पथरीला, कीचड़ भरा था और जिसका कोई पूर्वानुमान लगाना मुश्किल था। मैं कई बार गिरा भी; ! लेकिन जल्दी ही मुझे आत्मविश्वास आ गया और मैं तालाब के चक्कर ऐसे लगाने लगा जैसे मैं ही वहाँ का मालिक हूँ। मगर भारत की सड़कों पर गाड़ी चलाना अपने आप में एक अलग ही अनुभव है।

मेरा दोस्त मुझे शहर के बीचों बीच ले आया और गाड़ी से उतरकर सहजता से बोलाः ''चलाओ।''

मैं बनावटी मुस्कान के साथ बोलाः ''तुम पागल हो? यह भीड़भाड़ का वक्त है। मैं गियर भी मुश्किल से बदल पाता हूँ। मैं तुम्हें और रास्ते में आने वाले हर एक व्यक्ति को मार डालूँगा।''

लेकिन उसे कोई फर्क नहीं पड़ा। चेहरे पर कठोरता और पूरे विश्वास के भाव के साथ वह दोबारा बोलाः ''चलाओ।''

मैं उछलकर मोटरसाइकिल पर बैठा और कुछ करीबी दुर्घटनाओं से बचते हुए सुरक्षित घर पहुँच गया। डरने के साथ मैं रोमांचित भी था। उसके बाद मुझ में भारत की सड़कों के पागलपन में घुसने का आत्मविश्वास और हिम्मत आ गई और मैं बहुत दूर दूर तक जाकर सकुशल वापस लौटने लगा। उस दिन मैंने एक बहुत महत्वपूर्ण सबक सीखा कि असफलता के डर को दूर रख कर सफलता के संतोष पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

घिसी बाई

घिसी बाई परमदा के सबसे अधिक सम्मानित व्यक्तियों में से एक हैं। यह दक्षिणी राजस्थान में अरावली पर्वत माला की तलहटी में गिरवा प्रखण्ड़ का एक छोटा गाँव है। घिसी बाई एक बूढ़ी और निरक्षर महिला हैं किंतु उनकी उपस्थिति अपने आप में असाधारण प्रतीत होती है। जब वे बोलती हैं उनके चेहरे पर एक अद्भुत मोहक मुस्कान आ जाती है। जब भी मैं उनसे मिला उन्होंने गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया। उनकी बूढ़ी आँखों की गहराई में ऐसी चमक दिखाई देती है जो घोर निराशावादी व्यक्ति में भी आशा, उत्साह और प्रेरणा का संचार कर दे। हालाँकि घिसी बाई निरक्षर हैं, किंतु उनके पास शिक्षा और ज्ञान का अभाव नहीं। उनका यह कहना बिल्कुल सही मालूम पड़ता है कि "साक्षरता शिक्षा नहीं है"। वास्तव में, निरक्षर व्यक्तियों के साथ समय बिता कर मेरे लिए निरक्षरता के मायने बदल गए हैं।

उदयपुर के केंद्र से घिसी बाई की हाथों से निर्मित मिट्टी की झोपड़ी तक पहुँचने में मोटरसाइकिल से मुश्किल से 45 मिनट लगते हैं। हालाँकि, उदयपुर भारत के कुछ अन्य शहरों जितना बड़ा नहीं है लेकिन यहाँ का इतिहास काफी समृद्ध और महत्वपूर्ण है। एक बार जब मैं गाड़ी से एक छोटे गाँव से गुजर रहा था मेरा एक दोस्त जो कि उदयपुर से था बोला 'मुझे विश्वास नहीं होता कि आज भी इस युग में लोग इस तरह से रहते हैं !' साधारण तौर पर मैं उसकी इस बात से सहमत भी हो जाता मगर घिसी बाई द्वारा आश्चर्यपूर्वक कही गयी एक बात मुझे ज्यादा ठीक लगी 'मुझे आश्चर्य होता है कि उदयपुर में लोग इस तरह रहते हैं !'

फिर भी, जीवन के अलग–अलग तरीकों के बारे में आप कुछ महसूस करते हैं, आपकी अपनी सोच होती है। मैं उदयपुर में जिस तरह रहता था और वहाँ से महज 40 किलोमीटर दूर परमदा गाँव में रहन–सहन का जो तरीका था वह इतना अलग था कि मुझे लगता था कि मैं टाइम मशीन का उपयोग कर घिसी बाई के घर गया हूँ। जबकि, वहाँ जाने के लिए मुझे सिर्फ लाल रंग की हीरो होंडा मोटरसाइकिल के 1986 के मॉडल, आधी टंकी गैस और सूरज की बेरहम गर्मी से लड़ने की इच्छा शक्ति की जरूरत होती थी। मुझे यह समझने में देर नहीं लगी कि परंपरागत लाल साड़ी पहनने वाली इस महिला की बातचीत, विचार, अंत दूरदृष्टि और सोच अपने समय से आगे नहीं थी तो अपने समय से पीछे भी नहीं थी। उनके हावभाव में मानवीयता का भाव था, और उनकी अभिव्यक्ति में निःसंदेह विचारशीलता भी थी जिनके कारण उनके साथ वार्तालाप करना आनंदपूर्ण हो जाता था। सच्चाई यह है कि मैं ऐसा महसूस नहीं करता था कि मैं एक सशक्त ग्रामीण भारतीय महिला के साथ बैठा हूँ, बल्कि मुझे यह महसूस होता था कि मैं एक अचंभित कर देने वाले सशक्त मानव के साथ बैठा हूँ। गाँव वालों के अधिकारों के लिए और भ्रष्टाचार के विरुद्ध पूरा जीवन संघर्ष करने के कारण पूरे समुदाय में उनके प्रति आदर का भाव था। एक लीडर के रूप में अपने कार्यकाल में उन्होंने गाँव वालों को कई स्वास्थ्य और शिक्षा कार्यक्रमों से परिचित कराकर उन्हें क्रियान्वित किया। वे अपना नाम भी मुश्किल से लिख पाती थी फिर भी उन्होंने इतना कुछ कर दिखाया !

घिसी बाई गुर्जर समुदाय (एक जातीय समूह) के एक परिवार की सबसे छोटी संतान हैं। जब मैंने उनसे अपने बचपन के बारे में कुछ बताने का कहा तो उन्होंने कहा, ‘‘मैं अपने परिवार में इकलौती लड़की थी, और इसलिए मुझे बहुत ही कम बाहर जाने दिया जाता था। मुझे शिक्षा नहीं दिलायी गई, और यदि घर में कभी दूध होता तो वह मुझे सबके बाद थोड़ा मिलता था.... वह भी यदि मिला तो।’’ यह अत्यंत दुःखद है कि भारत में बहुत सी लड़कियों को परिवार पर आर्थिक रूप से बोझ समझा जाता है क्योंकि शादी के वक्त लड़की के परिवार की ओर से दूल्हे के परिवार को दहेज देना पड़ता है। इस धारणा और पर्दा प्रथा पुरुषों और बुजुर्ग महिलाओं के सामने चेहरा ढँका रखने का शिष्टाचार के कारण अनेक परिवार अपनी लड़कियों को शिक्षा दिलाने से परहेज करते हैं। वे इसे धन की बर्बादी समझते हैं क्योंकि लडकियाँ शादी के बाद चली जाती हैं। हालाँकि, एक शिक्षित महिला का एक समुदाय पर इतना जबरदस्त असर पड़ सकता है कि इस प्रथा

का पूरे समुदाय पर पड़ने वाला नकारात्मक प्रभाव स्पष्ट हो जाए। उदाहरण के लिए, शोध से यह संकेत मिलते हैं कि शिक्षित माताओं के बच्चे सामान्यतः उन बच्चों से ज्यादा शिक्षा प्राप्त करते हैं जिनकी माताएँ शिक्षित नहीं होती।
घिसी बाई के पति का परिवार अधिक संपन्न नहीं था और उसके पास उनकी शादी होने पर उन्हें देने के लिए पर्याप्त जमीन भी नहीं थी। इसलिए आज घिसी बाई उस जमीन पर रहती हैं जो उन्हें पूरे गाँव ने मिलकर दी थी। समुदाय की इस उदारता ने घिसी बाई के मन में यह प्रेरणा उत्पन्न की कि वे भी बदले में समुदाय के लिए कुछ करें और वे सामाजिक रूप से अधिक सक्रिय हो गयी। आसपास के गाँवों की महिलाओं से उन्होंने सेवा मंदिर के बारे में सुना और बैठकों (मीटिंग) में जाना शुरू किया। वहाँ से प्रेरणा पाकर उन्होंने अपने समुदाय में भी इस तरह की बैठकें आयोजित की। उनकी स्वाभाविक लोकप्रियता और गाँव की महिलाओं को एक साथ इकट्ठा करने की उनकी क्षमता ने उन्हें सेवा मंदिर के लिए जमीनी स्तर का एक आदर्श कार्यकर्ता (वॉलंटियर) बना दिया।

सेवा मंदिर के स्व–सहायता समूहों के माध्यम से घिसी बाई ने महिलाओं के लिए सक्रिय होने और सम्मान पाने का अनूठा अवसर उपलब्ध कराया। बैठकों में महिलाएँ अपने मुद्दों जैसे – गर्भ निरोध, स्वास्थ्य, शिक्षा और घरेलू दुर्व्यवहार पर चर्चा करने लगी। घिसी बाई एक अच्छी स्वाभाविक श्रोता होने के साथ दूसरों की सहायता के लिए हमेशा तत्पर एक ऐसी महिला थी जो समुदाय में पैदा होने वाले घरेलू विवादों में बीच–बचाव के लिए अक्सर खुद ही पहुँच जाया करती थी।

जमीनी स्तर के लीडर कितनी ईमानदारी, सच्चाई और सार्थकता के साथ काम कर सकते हैं घिसी बाई ने इसकी एक अद्‌भुत् मिसाल कायम कर दिखायी। निरक्षरता कभी उनके रास्ते में रुकावट नहीं बन सकी। वास्तव में, उन्हें यह कहते हुए निश्चित ही गर्व महसूस होता होगा, ''देखिये मैं साक्षर नहीं हूँ फिर भी कितना कुछ कर लेती हूँ।'' इसका कतई यह मतलब नहीं है कि वे अशिक्षित थी। जैसा कि उन्होंने बताया, ''सेवा मंदिर ने हमें शिक्षा दी और वह शिक्षक बनाया जो हम आज हैं।'' इस तरह की शिक्षा सिर्फ घिसी बाई के लिए ही नहीं बल्कि पूरे समुदाय के लिए लाभदायक है। यह पारंपरिक शिक्षा से अधिक नहीं तो कम प्रभावशाली भी नहीं है क्योंकि यह व्यावहारिक और अर्थपूर्ण है।

मुझे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि किस प्रकार घिसी बाई की निरक्षरता एक

लीडर के रूप में उनकी सफलता में मददगार रही। क्या यह संभव है कि इससे उन्हें अपने समुदाय से सम्मान पाने में वाकई मदद मिली? पढ़ने–लिखने में उनकी असमर्थता उन्हें अपने मनचाहे काम करने से कभी नहीं रोक पायी। उन्हें इतना सब करते देख कर दूसरी महिलाएँ जरूर सोचती होंगी, ''हम भी ऐसा क्यों नहीं कर सकती?'' यह सब कहने का यह मतलब नहीं है कि घिसी बाई पारंपरिक शिक्षा और साक्षरता के फायदों या महत्त्व को नहीं मानती थी। उन्होंने अपने सभी बच्चों को स्कूल भेजा और गर्व से कहती हैं कि उनके गाँव परमदा का प्रत्येक बच्चा स्कूल जाता है।

सेवा मंदिर में प्रशिक्षण के वर्षों में उनमें समझ और आत्मविश्वास रूपी खूबियों का विकास हुआ। इस किताब में जिन लीडर्स का जिक्र है उन सभी में यह आत्मविश्वास रूपी खूबी एक समान मिलती है – चाहे वे साक्षर हों या निरक्षर। दुर्भाग्यवश, जो लोग पढ़–लिख नहीं पाते समाज उनकी इस कमी को एक धब्बे के रूप में देखता है और इस तरह वह निरक्षर व्यक्तियों के आत्मविश्वास को कमजोर करता है। जबकि प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों का आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए प्रयास करना चाहिए। अपने आसपास के लोगों के लिए घिसी बाई एक प्रेरणा स्रोत हैं जो यह दर्शाती हैं कि कैसे खुद की गरिमा और गौरव की रक्षा कर उन्हें परिपोषित किया जाए। जमीनी स्तर पर, अक्सर सम्मान और गरिमा के रूप में ही भुगतान चुकाया जाता है और इसलिए इन्हें हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए।

घिसी बाई के आत्मविश्वास को रेखांकित करने वाला एक वाकया है जो करीब पाँच साल पहले हुआ था। यह वाकया यह भी बताता है कि उनका महिला होना उनके लिए किस तरह एक समस्या और साथ ही उसका एक हल भी था। गाँव की एक ऑक्जीलरी नर्स मिडवाइफ (एएनएम्) थी जिसे सरकार द्वारा वेतन दिया जाता था। वह गाँव वालों से पैसे माँगते पाई गई। वह अक्सर बिना कारण मरीजों को अपने घर बुलाने लगी और अतिरिक्त फीस कमाने के लिए निजी तौर पर प्रसूतियाँ कराने लगी। घिसी बाई और गाँव की औरतों ने नर्स मिडवाइफ से बातचीत करने की कोशिश की किंतु कोई नतीजा नहीं निकला। इस पर वे सभी इकट्ठा होकर स्थानीय सरकारी अधिकारी के पास शिकायत दर्ज कराने पहुँचे। उस अधिकारी ने गाँव के डॉक्टर से, जो उदयपुर में रहता था, इस मामले को हल करने में मदद करने के लिए कहा। लेकिन जल्दी ही यह पता चल गया कि

उसकी निष्ठा नर्स मिडवाइफ के प्रति थी। उसने घिसी बाई से कहा कि वे अपने हस्ताक्षर के साथ एक पत्र लिखकर दें जिसमें यह लिखा हो कि मिडवाइफ नर्स ने एक बार पैसा लिया लेकिन अब पैसा देना बंद कर दिया है। जाहिर है, इस पत्र का उपयोग अदालत में इस सबूत के तौर पर होता कि समस्या का समाधान हो गया है। लेकिन यह भाँपते हुए कि नर्स मिडवाइफ पैसे लेना बंद नहीं करेगी घिसी बाई ने सही निर्णय लेते हुए ऐसे किसी पत्र पर दस्तखत करने से इंकार कर दिया।

इस घटना के बाद, एक दिन जब घिसी बाई काम पर जा रही थी, उनकी बस को रोककर उन्हें बस से उतार कर जबरन एक निजी वाहन में ले जाया गया। उस वाहन के अंदर वही डॉक्टर और वे लोग थे जो ए एन एम के खिलाफ जाँच में शामिल थे। उन्होंने घिसी बाई को डरा–धमका कर एक पत्र पर दस्तखत करने को मजबूर किया। कुछ समय बाद, यह मुद्दा राज्य की राजधानी जयपुर में एक प्रशासनिक पैनल के सामने लाया गया, जहाँ उनके द्वारा दस्तखत किया गया वह कागज इस सबूत के तौर पर पेश किया गया कि समस्या का समाधान हो गया है।

घिसी बाई अविचलित रही। उन्होंने कहा ''पैसा तो कोई भी पा सकता है, लेकिन दूसरों का सम्मान पाना हर एक के लिए संभव नहीं।'' गाँव में उनके प्रति इतनी अधिक श्रद्धा थी कि गाँव वाले उनके समर्थन में डटे रहे और उन्होंने गवाही दी कि डॉक्टर और नर्स मिडवाइफ ने फर्जीवाड़ा किया है, पत्र असली नहीं है। इसके तुरन्त बाद भ्रष्ट नर्स मिडवाइफ को काम से निकाल दिया गया।
यह जानकर दुःख होता है कि राजस्थान में गाँवों में इस तरह का शोषण आम बात है। जिन छोटे समुदायों में मजबूत नेतृत्व (लीडरशिप) की कमी है या जो अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हैं वह समुदाय ऐसे शोषण का जरा भी विरोध नहीं कर पाते। घिसी बाई के पास जन्मजात आत्मविश्वास था जो सेवा मंदिर के प्रशिक्षण कार्यक्रमों की बदौलत और बढ़ा। इसके अलावा वे इस बात को भी समझती भी थी कि सामान्य हित के लिए कार्य करना कितना महत्वपूर्ण है। इन खूबियों ने उन्हें ऐसे निंदनीय अपराधों के खिलाफ खड़े होने की ताकत दी।

मैं सिर्फ कल्पना ही कर सकता हूँ कि घिसी बाई को उस तरह के एहसास का ना जाने कितनी बार सामना करना पड़ा होगा जिसका सामना मुझे शहर के बीचों

बीच से घर तक पहली बार गाड़ी चलाने पर करना पड़ा था। किसी अनजान डर से घबराया हुआ किंतु फिर भी अपने इरादे पर अटल। अनजान डर के प्रति निर्भयता के ऐसे रवैये ने ही घिसी बाई को एक सीखने वाले से सिखाने वाला या शिक्षक बना दिया था। मैं स्वयं के अनुभव की तुलना घिसी बाई के अनुभव से करने का दिखावा नहीं करना चाहता, लेकिन उदयपुर में पहली बार आजमाइश भरी ड्राइविंग के दौरान खुद को बचाने के लिए मुझे जिस अंधे आत्मविश्वास की जरूरत महसूस हुई उसके आधार पर मैं यह समझने की कोशिश कर सकता हूँ कि घिसी बाई ने कैसा महसूस किया होगा। औपचारिक रूप से कुछ सीखे बिना सफल होने पर मुझे भी गर्व महसूस हुआ था। मुझे भी कुछ हद तक अंधे आत्मविश्वास और इस यकीन का सहारा लेना पड़ा था कि मैं जो करना चाहता हूँ वह मैं औपचारिक ढंग से सीखे बिना भी सड़क पर करने में सक्षम हूँ।

मोटरसाइकिल, जीप, ट्रक और बस

जब आप भारत में गाड़ी चलाना सीखते हैं और सड़क के कानून–कायदों को समझने लगते हैं, आपको गाड़ियों की हैसियत का क्रम साफ–साफ दिखायी देने लगता है। पहली बार जब मैं अपने एक दोस्त की मोटरसाइकिल पर पीछे बैठा, उसने यूँ ही साधारण तौर पर मुझे यह बताया कि सड़क कैसे चलती है।

''सामान्य रूप से नियम सरल है,'' उसने कहा, ''यदि वह आपकी गाड़ी से बड़ी गाड़ी है, उसे रास्ते पर हक है!''

यह कहना बेकार है, जब हम मोटरसाइकिल पर बिना हेलमेट पीछे बैठे, उसने मुझे जो बताया वह मुझे हास्यास्पद लगा। साइकिल, रिक्शा और मोटरसाइकिलें गाड़ियों के क्रम में सबसे नीचे आती हैं। जबकि जीप, ट्रक और बस सबसे ऊपर आते हैं। इसके अलावा गले नहीं उतरने वाला एक मूर्खतापूर्ण नियम यह भी है कि यदि गाड़ी में बैठने वाले ज्यादा शक्तिशाली या धनवान हैं तो यह उनके लिए दूसरी गाड़ियों को पछाड़ने के लिए एक तुरुप के पत्ते के समान है। हालाँकि, इससे शुरू में मुझे कुछ डर महसूस हुआ, लेकिन जल्दी ही मैं यह समझ गया कि अलग–अलग गाड़ियों का स्थान इस क्रम में जो भी हो, किसी भी तरह के वाहन से मैं हमेशा अपने गंतव्य पर पहुँच ही जाता हूँ और सड़क पर अपेक्षित व्यवहार; के बारे में इन पूर्वाग्रहों के बावजूद भी मुझे याद है, मैं यह सोचता था कि किसी व्यक्ति की कार बड़ी या छोटी है इसका यह अर्थ नहीं कि वह बेहतर या कमतर है और मेरी मोटरसाइकिल मेरे आगे चलने वाली कार से छोटी है। इसका यह मतलब नहीं कि मैं अपने गंतव्य तक पहुँचने मैं कम सक्षम हूँ।

कालूलाल गमेती

अपनी बूढ़ी नीली आँखों से एकटक देखने वाले कालूलाल गमेती किसी बीस–पच्चीस साल के नवयुवक की तरह जीवन से भरपूर मालूम पड़ते हैं। चार बच्चों के दादा बन चुके कालूलाल गमेती एक ओजस्वी व्यक्ति हैं। उनका बातचीत का तरीका ऐसा है जो आपको और अधिक प्रश्न करते हुए मुद्दों की अधिक से अधिक गहराई में जाने के लिए प्रेरित करता है। साथ ही उनकी बातों में अत्यधिक बुद्धिमानी की झलक मिलती है। ऐसा लगता है जैसे वे बहुत गहरी और अर्थपूर्ण बात कर रहे हों। वास्तव में, वे आज 'मास्टरसाब के नाम से जाने जाते हैं, हिंदी में इसका अर्थ शिक्षक होता है। कालूलाल गमेती की विनम्रता और ईमानदारी ने मुझे नतमस्तक कर दिया। सामुदायिक कार्यों के प्रति उनके सतर्कतापूर्ण रवैये ने सौम्यता और शांति से भरपूर एक ऐसा वातावरण निर्मित किया जिसके कारण वे एक ऐसे गाँव में अत्यंत प्रभावशाली ढंग से कार्य करने में सफल रहे जिसमें अनेक जातीय समूह रहते हैं।

डुलावतों का गुड़ा गाँव में दस से अधिक अलग–अलग जातीय समूहों के लोग निवास करते हैं। एक ही स्थान पर इतनी अधिक जातियों के होने से सामुदायिक कार्य के लिए विशेष रूप से कठिनाई भरा वातावरण बन जाता है, क्योंकि परिवर्तन की प्रक्रिया में जातियों के अपने–अपने पूर्वाग्रह अक्सर रुकावट डाल सकते हैं। यह आश्चर्यजनक है कि कालूलाल गमेती सबसे निचली जाति के सदस्य हैं लेकिन उन्होंने अपने विकास कार्यों के माध्यम से गाँव को एक सूत्र में पिरोने में बुनियादी भूमिका निभाई। उनकी सर्वप्रमुख खूबियों में से एक है उनकी यह जानने की समझ कि गाँव में ताकत कहाँ छुपी हुई है और दूसरी यह कि उस

ताकत को उपयोग में लाने के लिए क्या किया जाए। वे इस बात पर विशेष रोशनी डालते हैं कि इस ताकत को एक भौतिक संसाधन की तरह लेकर यदि उसे परिपोषित करते हुए मान्यता और सम्मान दिया जाए तो वह किस तरह समुदाय की सकारात्मक परिवर्तन लाने की क्षमता में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। किसी भी समुदाय के अंदरूनी शक्ति संबंधों के निर्धारण में जातिगत वर्गीकरण की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। गाँव की सबसे निचली जाति से होने के बावजूद कालूलाल गमेती ने कार्य करने में जो सफलता पायी वह सामुदायिक विकास के मार्ग पर सामाजिक मान्यताओं और रीति–रिवाजों में सुधार के लिए उनके जुनून और क्षमता की गवाही देती है।
कालूराम गमेती की पहली परियोजना सरल और स्पष्ट थी। वे अपने पशुओं के लिए एक छप्पर और अपने घर में एक शौचालय बनाना चाहते थे। इन जरूरी सुविधाओं की उनके यहाँ कमी थी और उन्होंने इस दिशा में प्रयास करने का निर्णय लिया। जब गाँव के अन्य लोगों ने उनकी इस सफलता को देखा, तो उनके मन में भी वैसा ही करने की इच्छा जागने में अधिक समय नहीं लगा। यह देखकर कि उनके समुदाय को इसकी जरूरत है, कालूराम गमेती ने उन लोगों की मदद करना शुरू किया जो अपने घरों में ऐसी सुविधाएँ चाहते थे। जल्द ही, उनके पूरे गाँव में पशुओं के लिए छप्पर और घरों में शौचालय बन गए।

कालूलाल गमेती ने बताया, ''सच्चाई यह है कि इन गाँवों के अमीर से अमीर लोग भी अभी भी काफी गरीब हैं।''

एक व्यक्ति की दूरदर्शिता के रूप में हुई इस एक शुरुआत को जल्द ही कई लोगों ने उम्र, सामाजिक स्थिति और जाति के दायरों से परे अपना सपना बना लिया। इस परियोजना के माध्यम से कालूलाल गमेती ने एक स्पष्ट और महत्वपूर्ण सबक सीखा। परिवर्तन को बढ़ावा देने के लिए परियोजना से परे भी गाँव में अलग–अलग आयु वर्गों और जातीय समूहों को साथ लेकर काम करना जरूरी। जल्दी ही यह कालूलाल गमेती की कार्य–प्रणाली बन गयी।

जब हम कालूलाल गमेती से उनके घर के सामने बातचीत कर रहे थे, उन्होंने शांतिपूर्वक दोहराया, ''संवाद, धैर्य और समय किसी भी तरह की सामुदायिक परियोजना की सफलता के मुख्य घटक होते हैं।'' उस वक्त हम उनके पोते पोतियों से घिरे हुए थे जो सावधानी और जिज्ञासा से इस इंटरव्यू की गतिविधि को देख रहे थे (मेरी उपस्थिति और मैंने उनके दादा के मुँह के सामने जो विदेशी

रेकॉर्डिंग यंत्र पकड़ा हुआ था उसे देखकर वे क्या सोच रहे होंगे इसकी मैं सिर्फ कल्पना ही कर सकता हूँ)। इंटरव्यू के आगे बढ़ने के कुछ ही समय बाद वह सभी बच्चे साहस बटोर कर कालूलाल गमेती को तंग करने लगे। बच्चे उन पर चढ़ने लगे और उनके साथ खींचातानी करने लगे। कालूलाल गमेती उनसे बचने की कोशिश करते रहे लेकिन उनकी मुस्कान से साफ मालूम पड़ रहा था कि उन्हें अपने परिवार से कितना प्रेम था और वे परिवार के साथ कितना आनंद महसूस करते थे। यह स्पष्ट था कि परिवार और समुदाय दोनों उनके लिए वाकई कितने महत्वपूर्ण हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि सामुदायिक केंद्र का निर्माण कालूलाल गमेती के लिए उनकी सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक था। सामुदायिक केंद्र आ जाने से गाँव के विकास और पूरे समुदाय की एकता और तालमेल दोनों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। यह केंद्र बनने से पहले बड़ी शासकीय बैठकों और सामुदायिक बैठकों के आयोजन या अन्य आयोजनों जैसे शादी, धार्मिक समारोहों, प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम या प्री–स्कूल बालवाड़ी कार्यक्रम वगैरह के लिए कोई स्थान उपलब्ध नहीं था। ऐसे आयोजनों के लिए, खासकर बारिश और ठंड के मौसम में, एक बंद स्थान की बहुत जरूरत थी। यह जरूरत समझने में कालूलाल गमेती को देर नहीं लगी और उन्होंने एक सामुदायिक केंद्र के निर्माण का प्रस्ताव पेश किया। सौभाग्य से, प्रस्ताव आसानी से मंजूर हो गया और केंद्र अपेक्षाकृत कम समय में बनकर तैयार हो गया। जैसा कि कालूलाल गमेती बताते हैं, ''इससे लोगों को एक दूसरे के निकट आने में मदद मिली'' विशेषकर उन लोगों को जो यह नहीं जानना चाहते थे या नहीं जानते थे कि यह कैसे किया जाए।

यह एकल उपलब्धि ही कालूलाल गमेती को मान्यता दिलाने के लिए पर्याप्त कही जा सकती है, और चूँकि गाँव की सबसे निचली जाति से होने के बावजूद उन्होंने यह कर दिखाया इसलिए उनकी यह उपलब्धि और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। जातिगत ऊँच–नीच पर आधारित वर्गीकरण, जिसने उनसे पहले के कई लोगों के रास्ते में रुकावट पैदा की, के बावजूद ऊपर उठना उन्हें और अधिक सम्माननीय बनाता है क्योंकि यह ना सिर्फ एक असाधारण उपलब्धि है बल्कि इससे दूसरों को यह सीख मिलती है कि यह बात किसी व्यक्ति को अपनी मंजिल पर पहुँचने से नहीं रोक सकती कि वह किस परिवार में पैदा हुआ है। कोई मोटरसाइकिल पर जाए या जीप से वह निश्चित रूप से अपने गंतव्य पर पहुँचकर अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।

यह गौर करने लायक बात है कि कालूलाल गमेती ने अकेले ने काम नहीं किया। वास्तव में, मैं जितने भी लीडर्स से मिला उनमें से कोई भी कभी यह दावा नहीं करेगा कि उन्होंने अकेले काम किया। उदाहरण के लिए, ग्राम समूह बनाने में कालूलाल गमेती की भूमिका महत्वपूर्ण थी। यह गाँव वालों का एक अनौपचारिक समूह था जिसकी एक आंतरिक संरचना थी या उसमें समितियाँ होती थी जैसी स्थानीय शासन में होती हैं। सेवा मंदिर द्वारा निर्मित किए जाने वाले ग्राम समूह स्थानीय शक्ति संबंधों को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण समुदायों को संगठित करने का एक ऐसा तरीका है जिसका उद्देश्य स्थानीय शासन और समुदाय की जवाबदेही बनाए रखना है। हालाँकि, ग्राम समूह का कोई वैधानिक अस्तित्व नहीं होता, फिर भी वह अपनी लोकतांत्रिक संरचना और संख्या की शक्ति के कारण प्रभावशाली होता है। यह निजी स्रोतों से आर्थिक सहायता प्राप्त कर उसे समुदायों द्वारा की जा रही विकास की पहल में लगाने का जरिया भी बन गया है। यह तरीका अनेक गाँवों में सामुदायिक कार्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली साबित हुआ है। उदाहरण के लिए, इसके माध्यम से कालूलाल गमेती गाँव की सार्वजनिक भूमि की रक्षा करने में सफल रहे हैं। हालाँकि, डुलावतों का गुड़ा गाँव में ग्राम समूह के निर्माण में कालूलाल गमेती की अग्रणी भूमिका है, किंतु अन्य लोगों की सहमति और सहयोग के बिना इसे ऐसी सफलता मिलना संभव नहीं था जिसके कारण उनके गाँव की उन्नति और एकजुटता दूसरे समुदायों के लिए एक आदर्श बन गई।

डुलावतों का गुड़ा में भौतिक संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए कालूलाल गमेती द्वारा किए गए प्रयासों में उनकी मानवीय कुशलता के साथ एक शिक्षक और लीडर के रूप में उनकी कुशलता की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। यह खेदजनक है कि खराब प्रबंधन प्रणाली के कारण अक्सर चरागाह और सार्वजनिक भूमि बेकार पड़ी रहती है, जो समुदाय अपनी सार्वजनिक भूमि की सुरक्षा के लिए आवश्यक कार्यवाही करते हैं उन्हें अपने समुदाय में सकारात्मक और ठोस परिणाम मिलते हैं। हालाँकि, क्षेत्र में अपवादस्वरूप बहुत कम ही परियोजनाओं के परिणाम तुरंत मिलते हैं, लेकिन लंबे समय में परिणाम अक्सर गाँव वालों की उम्मीदों से बेहत्तर ही होते हैं। एक और दुःखद पहलू यह है कि कई बार वन विभाग किसी इलाके का विकास करता है और इसके लिए वह अच्छी खासी मात्रा में संसाधन भी लगाता है लेकिन वह सामाजिक, राजनीतिक और शक्ति संरचनाओं की ओर ध्यान नहीं देता जिन पर अंततः इन

हस्तक्षेपों (प्रयासों) की सफलता निर्भर करती है। अब भी जंगलों, सार्वजनिक भूमि और चरागाहों का प्रबंधन इसी ढंग से करते हुए परियोजना की समयावधि और सततता निर्धारित की जाती है। भौतिक स्तर पर भौतिक संसाधनों को पाने या खोने के रूप में ही नहीं बल्कि सामाजिक स्तर पर समुदाय के आत्मविश्वास को पाने या खोने के रूप में भी एक सार्वजनिक पहल की असफलता घातक सिद्ध हो सकती है। कालूलाल गमेती के गाँव में भी स्थिति कुछ अलग नहीं थी, जहाँ सन 2002 में पड़े सूखे से गाँव लगभग बर्बाद हो गया था। चारे और पानी की गंभीर कमी से भूख–प्यास से बड़ी मात्रा में पशु मारे गए। इस दिल दहला देने वाली घटना ने कालूलाल गमेती और ग्राम समूह को चारे के लिए अपने गाँव की सार्वजनिक जमीनों के विकास के लिए तरीके ढूँढने के लिए बाध्य किया। अपनी खोजबीन में उन्होंने पाया कि उनके गाँव को सार्वजनिक भूमि के रूप में आवंटित की गई भूमि के लगभग 90% भाग पर उनके अपने गाँव वालों ने ही अतिक्रमण कर रखा था।

डुलावतों का गुड़ा में कुल 228 परिवार रहते हैं जिनमें से 101 ने गाँव की सार्वजनिक भूमि पर अतिक्रमण कर रखा था। अपनी निजी जमीन की हद को आगे बढ़ाकर लोग अतिक्रमण कर लेते या सार्वजनिक भूमि का कोई अलग टुकड़ा ढूँढ कर उस पर अपना हक बताते। इस मुद्दे को हल करना आसान नहीं था, और इस दिशा में काम करने के लिए आत्मविश्वास से भरे बुद्धिमान एवं दृढ़ संकल्प वाले महिला और पुरुषों की जरूरत थी। कालूलाल गमेती यह समझ गए कि इस तरह के कार्य की सफलता के लिए उन्हें प्रत्येक जाति और आयु वर्ग के समर्थन की जरूरत होगी। गाँव के बुजुर्गों और सामाजिक रूप से अधिक सम्मानित व्यक्तियों का सहारा लेकर उन्होंने अलग–अलग जातियों के बीच एकता स्थापित की। इस तरह, जब कुछ व्यक्ति कोई विरोध दर्शाते या प्रक्रिया में बाधा डालने की कोशिश करते तो कालूलाल गमेती और ग्राम समूह के पास उन्हें नियंत्रित करके एकता बरकरार रखने के लिए जरूरी ताकत आ गई।

अतिक्रमणों से किस तरह निपटा जाए यह प्रश्न काफी जटिल हो सकता है। अतिक्रमण को महज पहचानना भी अपने आप में साधारण कार्य नहीं है। कौन अतिक्रमण के लिए जिम्मेदार है यह जानने की प्रक्रिया में समस्या हल होने के बजाय उल्टे बढ़ सकती है। इसके अलावा, एक बार कौन और क्या समझ भले ही आ जाए, अतिक्रमण को हटाना एक जटिल और संभवतः अत्यंत भावुक प्रक्रिया है जो कभी–कभी लगभग असंभव लगती है। इस स्थिति को समझते

हुए, कालूलाल गमेती और ग्राम समूह अतिक्रमण करने वालों के पास तब ही जाते थे जब उन्हें विश्वास हो कि जिन्हें वह भूमि छोड़ने के लिए कहा जाएगा उन लोगों सहित पूरे समुदाय को इससे लाभ होगा।
अतिक्रमण करने वाले अलग अलग अलग प्रकार के लोग होते हैं और उन सभी को 'उनकी' भूमि छोड़ने के लिए नहीं कहा जाता। ग्राम समूह ने यह तय किया कि कोई भी अतिक्रमण करने वाला यदि यह साबित कर दे कि उसने 1980 से पहले भूमि पर कब्जा लिया था तो उसे भूमि छोड़ने के लिए नहीं कहा जाएगा। मगर, 1980 के बाद के मामलों में दो बातों को ध्यान में रखते हुए कब्जा की गई भूमि की वैधता की परखी जाएगी। पहली, यदि किसी अतिक्रमण करने वाले ने भूमि का उपयोग सिर्फ खेती के लिए किया हो तो उसे वैसा ही छोड़ दिया जाएगा। दूसरी, अतिक्रमण करने वाले को तभी हटाया जाएगा जब ग्राम समूह सामूहिक रूप से उस भूमि का विकास शुरू करने के लिए तैयार हो।

इन गाँवों में भूमि साक्षरता या भू–अधिकारों और भूमि संबंधी जिम्मेदारियों के बारे में बहुत ही कम जानकारी है। इसके परिणामस्वरूप, अनजाने में इनका उल्लंघन करते हुए अनेक परिवार बरसों से भूमि पर अतिक्रमण करते चले आ रहे हैं। दृढ़ निश्चयी कालूलाल गमेती अनजाने में अतिक्रमण करते चले आ रहे परिवारों के प्रति सहानुभूति रखते हैं किंतु वे यह स्पष्ट करते हैं कि अतिक्रमण करने वालों का हट जाना लगभग हमेशा ही बेहतर होता है क्योंकि इससे सभी के रहने के लिए एक मजबूत और सुरक्षित व्यवस्था का रास्ता खुलता है। अतिक्रमण अक्सर सरकारी भूमियों पर होते हैं और इन्हें किसी भी समय वापस लिए जाने का खतरा बना रहता है। फिर भी, अतिक्रमण करने वाले किसी व्यक्ति के साथ अतिक्रमण की गई भूमि का कुछ हिस्सा छोड़ने या पूरी तरह स्थानांतरित होने के लिए जब ग्राम समूह चर्चा करता है तो यह सुनिश्चित किया जाता है कि अनुबंध कानूनी रूप से बंधनकारी हो और बदले में संबंधित पक्षकार को सुरक्षा और स्थायित्व मिले।

डुलावतों का गुड़ा की सार्वजनिक भूमि किसी एक स्थान पर केंद्रित ना होकर पूरे गाँव में फैली हुई थी। इस कारण वहाँ तनाव कुछ कम था क्योंकि उन्हें एक बार में अतिक्रमण करने वाले एक ही परिवार या एक ही छोटे समूह से बात करने की जरूरत थी। यदि भूमि के एक ही भाग पर एक साथ 101 परिवारों का अतिक्रमण होता तो उसका सारा पुनः आकलन करना कितना मुश्किल होता इसकी सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है। सार्वजनिक भूमि के एक टुकड़े का मामला अलग

से निपटाने के बाद ही अगले टुकड़े के मामले की तरफ कदम बढ़ाया गया। फिर भी, इस प्रक्रिया में बहुत सरल मामले से लेकर लगभग असंभव जैसे मामले शामिल थे।

नाथू का मामला ग्राम सभा के सामने आने वाली कठिनाइयों और उनके समाधान दोनों का एक उदाहरण है। यह पाया गया कि नाथू ने तीन अलग–अलग इलाकों में गलत ढंग से सार्वजनिक भूमि पर अतिक्रमण कर रखा था। फिर भी वह यह दावा करते हुए वहाँ से हटने को तैयार नहीं था कि वह उसका वैधानिक अधिकार है। ग्राम समूह नाथू के साथ यह समझौता करना चाहता था कि अतिक्रमण किए हुए भूमि के दो टुकड़े वह अपने पास रखे और एक खास टुकड़ा छोड़ दे। किंतु वह इस पर भी सहयोग नहीं कर रहा था। तब ग्राम समूह ने सरपंच से अनापत्ति प्रमाण पत्र लेकर चरागाह के संरक्षण और विकास के लिए कानूनी अधिकार प्राप्त किया। अनापत्ति प्रमाण पत्र में सिर्फ यह कहा गया कि स्थानीय शासन को ग्राम समूह द्वारा गाँव के चरागाह के विकास में कोई आपत्ति नहीं है। सिद्धांततया, ग्राम समूह अनापत्ति प्रमाण पत्र मिलने के बाद एक गाँव वाले को किसी सार्वजनिक भूमि से बेदखल कर सकता है।

नाथू गाँव का एक प्रभावशाली व्यक्ति था और उँचे ओहदों वालों के साथ उसका मेलजोल और मित्रता थी। सरपंच उसके ऐसे ही मित्रों में से एक था। कालूलाल गमेती सरपंच से नाराज थे। इसलिए गाँव के उस चरागाह के विकास के लिए अनापत्ति के लिए पेश किए गए अपने अनुरोध के नामंजूर हो जाने पर कालूलाल गमेती और ग्राम समूह को कोई विशेष आश्चर्य नहीं हुआ। नाथूलाल के साथ समझौते का प्रयास करते कई महीने गुजर जाने के बाद गाँव ने यह तय किया कि अतिक्रमण छोड़ने के लिए दबाव बनाने के लिए नाथू माना पर सामाजिक प्रतिबंध लगाए जाएँ। इन समुदायों में जब कोई अपराध करता है और शासन उसे दंड देने में आनाकानी करता है तब सामाजिक प्रतिबंध अक्सर सबसे अधिक कारगर उपाय साबित होते हैं। इन समुदायों में आन्तरिक शासन के लिए यह उनकी परंपरागत प्रबंधकीय प्रणाली का सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका है।

इस किताब में वर्णित सभी लीडर्स ने कभी ना कभी सामाजिक प्रतिबंधों में अपनी रुचि दर्शाई है या उन मामलों का जिक्र किया है जिनमें अपराध करने वाले लोगों या परिवारों पर दबाव बनाने के लिए उनका उपयोग किया गया क्योंकि स्थानीय शासन ने उन मामलों से खुद को दूर कर रखा था। इस किताब में जिन समुदायों का जिक्र किया गया है उन्हें समझने के लिए में सामाजिक प्रतिबंधों की महत्वपूर्ण भूमिका को समझना जरूरी है। हम यह पाते हैं कि सामाजिक प्रतिबंधों

के उपयोग से सामुदायिक मूल्यों की रक्षा और सामुदायिक कार्य का प्रभावी क्रियान्वयन संभव हो जाता है।

सामाजिक प्रतिबंधों का उपयोग हल्के में नहीं किया जाता। यह कम असुविधाजनक, जैसे लोगों को किसी विशेष आयोजन में शामिल होने से रोकना, से लेकर कुछ इस तरह तक के हो सकते हैं जो किसी व्यक्ति या परिवार को पूरी तरह कमजोर कर दें। जैसे दूसरे लोगों को मुसीबत के वक्त उस प्रतिबंधित व्यक्ति की सहायता करने से रोकना। सामाजिक प्रतिबंधों में सबसे गंभीर है समाज से बाहर निकाल देना, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिबंधित व्यक्ति किसी शादी, गाँव की बैठकों, अंतिम संस्कार, बच्चे का जन्म होने पर आयोजित होने वाले धार्मिक संस्कार, सामुदायिक आयोजनों में शामिल होने के अयोग्य हो जाता है और यदि फसल खराब हो जाती है तो मदद के लिए कोई उन्हें बचा हुआ भोजन भी नहीं दे सकता।

इन समुदायों में समस्याओं के समाधान के लिए प्राधिकारियों, जैसे पुलिस, के दखल के बजाय सामाजिक प्रतिबंधों को प्राथमिकता दी जाती है। पुलिस या बाहर के वकील की सहायता लेने से गाँव में फूट पड़ने का खतरा पैदा हो जाता है। हालाँकि, किसी भी मामले के अंत में कोई जीतता और कोई हारता है, लेकिन इस कठिन परीक्षा के दौर में अक्सर पूरे गाँव को तकलीफ सहनी पड़ सकती है। गाँवों में लगभग हर तरह की समस्याओं से निपटने के लिए अपनी खुद की प्रणालियाँ चलन में होती हैं। विवादों के निपटारे में प्राधिकारियों को बीच में लाना अपने आप में समरसतापूर्ण या मित्रतापूर्ण समाधान के रास्ते में रुकावट बन जाता है क्योंकि ऐसा होने पर मामला समुदाय का नहीं बल्कि पूरी तरह व्यक्तिगत बन कर रह जाता है। यह हास्यास्पद लगता है क्योंकि यह सुनकर ऐसा लगता है जैसे गाँव में कोई व्यक्तिगत विवाद का मामला हो ही नहीं। वास्तव में ऐसा नहीं है, फिर भी इस बात पर गाँव को आश्चर्य होगा कि किसी परिवार ने अपनी समस्या के समाधान के लिए बाहर से मदद क्यों ली। लोग इस तरह की बाहरी घुसपैठ से परेशानी महसूस करेंगे, उनके लिए ऐसा कोई भी समाधान स्वीकार करना मुश्किल है क्योंकि नियंत्रण उनके हाथों से जाता रहेगा।

जमीनी स्तर पर काम करने वाले कुछ नेताओं का कहना है कि किसी समस्या का समाधान सबसे पहले बातचीत से करने के लिए समुदाय द्वारा ईमानदारी से प्रयास किये जाते हैं। उनसे असफल होने पर ही सामाजिक प्रतिबंधों का सहारा

लिया जाता है। उदाहरण के लिए, नाथू के मामले में ग्राम समूह ने सरपंच से बातचीत कर मुद्दे को हल करने का प्रयास किया, जो असफल रहा। तब भी, इन मामले को अदालत में ले जाने के स्थान पर उन्होंने इसे अपने स्तर पर ही निपटाने को प्राथमिकता दी। सामाजिक प्रतिबन्ध बहुत कम ही असफल होते हैं, लेकिन यदि वे असफल होते हैं, तो समुदाय कानूनी रास्तों से कार्यवाही के प्रयास का मन बनाता है। ना चाह कर भी एक बात सोचने में आती है कि जिस तरह सामाजिक प्रतिबंधों का सकारात्मक उपयोग किया जा सकता है ठीक उसी तरह उनका नकारात्मक उपयोग भी किया जा सकता है। हालाँकि, जितने भी लीडर्स से मेरी बात हुई उनमें से हर एक ने यह दावा किया कि ऐसा नहीं हुआ। यह समझना महत्वपूर्ण है कि वास्तव में यह न्याय के लिए स्थानीय स्तर की एक व्यवस्था है जो उन खामियों से अछूती नहीं रह सकती है जो उसे बनाने वालों में रही हों।

नाथू के मामले में, गाँव ने उसे समाज से बाहर निकालने का निर्णय लिया। इसके अनुसार यह तय हुआ कि कोई भी नाथू के यहाँ होने वाले सामाजिक कार्यक्रमों जैसे शादियों या अंतिम संस्कार में नहीं जाएगा, और जरूरत के वक्त उसे कोई भी भोजन नहीं देगा और ना ही उसके साथ किसी तरह की सामाजिकता की मंजूरी होगी। उसके साथ सार्वजनिक रूप से बात करना तक प्रतिबंधित था । गाँवों में ऐसे गंभीर सामाजिक प्रतिबन्ध बहुत ही कम लगाए जाते हैं, लेकिन वे बहुत अधिक असरदार होते हैं। जल्दी ही नाथू ने खुद ही सरपंच को पत्र लिखकर आग्रह किया कि गाँव को अनापत्ति प्रमाण पत्र दे दिया जाए।
अतिक्रमण के अनगिनत कारण होते हैं, इसलिए हर एक मामले को अलग से देखना पड़ता है। अमीर और गरीब दोनों ही अतिक्रमण करते हैं। अतिक्रमण करने वाले सभी जातीय वर्गों में पाए जाते हैं। एक परिवार को किसी अतिक्रमण से न्यायोचित आधार पर ही हटाया जाना सुनिश्चित हो सके इसके लिए बातचीत का माहौल बना कर उस मामले को पूरी तरह समझना जरूरी होता है। कभी–कभी अधिक सख्त कदम उठाने की जरूरत भी पड़ती है जैसा कि नाथू के मामले में करना पड़ा। सामाजिक प्रतिबंधों को प्रभावी ढंग से लागू करने की क्षमता समुदाय की एकता और प्रतिबद्धता के लिए एक वरदान है।

कालूलाल गमेती और समुदाय दोनों के दृढ़ संकल्प और चिंता के बल पर डुलावतों का गुड़ा में मूल रूप से 2002 में पहचाने गए 101 में से 50 अतिक्रमण करने वालों को हटाया जा चुका है। इसमें प्रभावी प्रबंधन प्रणाली और गहरी

लगन की भी बड़ी भूमिका रही है। आज, डुलावतों का गुड़ा में समुदाय के उपयोग लिए लगभग 55 हेक्टेयर चरागाह भूमि उपलब्ध है। ग्राम समूह ने कालूलाल गमेती की अगुवाई में 2006 से 2010 से के बीच गाँव के चरागाहों की भूमि के 10 टुकड़ों से अतिक्रमण हटाया। गाँव में विकसित इन सभी चरागाहों की सुरक्षा और प्रबंधन की जिम्मेदारी अब सामूहिक रूप से ग्राम समूह द्वारा निभाई जाती है। यहाँ से काटी जाने वाली घास और अन्य उत्पादों का बंटवारा लाभान्वित परिवारों में एक समान किया जाता है। ऐसे इलाकों के संरक्षण और विकास के कितने अच्छे परिणाम हो सकते हैं डुलावतों का गुड़ा इसकी एक मिसाल है।

बड़ी गाड़ियों की तुलना में एक मोटरसाइकिल बराबर समझे जाने वाले कालूलाल गमेती बिना घबराए जाति व्यवस्था के बीच से अपना रास्ता बनाते हुए आगे निकले। वे अपनी हैसियत भली–भाँति जानते थे, लेकिन समाज में अपनी उस स्थिति को उन्होंने समुदाय की स्थिति नहीं सुधारने का बहाना कभी नहीं बनने दिया। ऊँची हैसियत वालों की भीड़ में बहुत छोटा वाहन होने के बावजूद कालूलाल गमेती महान उपलब्धियाँ हासिल करते हुए सामुदायिक सुधार की दिशा में अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफल रहे। आज वे एक ऐसे स्तम्भ के रूप में खड़े हैं जो यह याद दिलाता है कि लीडर को अनेक तरह की भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं, रास्ते पर चलने वाले किसी भी वाहन के लिए मंजिल पर पहुँचना मुमकिन है और यदि कोई यह बात समझ लेता है तो महान उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं।

''अगम्य'' रास्ता

हमारे सामने एक बड़ा आधा टूटा हुआ पुल था। बरसों के इस्तेमाल से बर्बाद हो चुका यह रास्ता उस कार से पार करना संभव नहीं था जिसमें मैं यात्रा कर रहा था। हम इस नतीजे पर पहुँचे कि हमारे पास कार से उतर कर पैदल जाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था क्योंकि आगे की यात्रा अभी शेष थी। हमनें अपने बैग उठाए और सावधानी से उस पुल को पार करने लगे जो नदी पर बुरी तरह धनुष के आकार में मुड़ कर लटका हुआ था। अनपेक्षित स्थितियाँ सामने आती थी और हमें खुद को उनके अनुसार ढ़ालना सीखना पड़ता था। मैंने यह गौर किया कि अपनी मंजिल तक पहुँचना हो तो हमेशा साफ या सरल (सुविधा जनक) रास्ता ही जरूरी नहीं।

मुझे याद है मैं बारिश का इंतजार करता रहता था। खाली नदियाँ देखकर मुझे बेचैनी होने लगती थी। नदी धरती पर मनुष्य के अस्तित्व के लिए सबसे ज्यादा जरूरी तत्व पानी प्रदान करने वाली जीवनरेखा होती है। यह एक तकलीफदायक और बेचैन करने वाला अहसास था कि मैं खुद से खुद को बार–बार यही प्रश्न पूछता पाता था कि नदी कहाँ खो गयी। अपने भारत प्रवास की मेरी सबसे गहरी यादें उदयपुर के बाहर के उस पहले गाँव से जुड़ी हुई हैं जहाँ एक लड़का, जो रात भर की भारी बारिश के बाद उस वक्त नदी से नहाकर आया ही था, मुझे अपने फोन पर ली गयी बारिश की तस्वीरें दिखा रहा था ! (और हाँ, भारत में गाँवों में अधिकांश लोगों के पास फोन होता है भले ही नेटवर्क सिग्नल ना मिलें !)

पानी की कमी उदयपुर में एक मुख्य समस्या है। मानसून आने से पहले वहाँ का जो नजारा होता है, मानसून आने के बाद वह पूरी तरह बदल जाता है। वातावरण में सुहानी ठंडक आ जाती है। मानसून सिर्फ बारिश ना होने से ही नहीं बल्कि इस बात से भी फेल हो सकता है कि बारिश उतनी बार ना हो जितनी बार होनी चाहिए। यदि एक बार में बहुत अधिक बारिश होती है तो मिट्टी की ऊपरी सतह खराब हो सकती है। यदि पर्याप्त वर्षा नहीं होती तो मिट्टी कठोर हो सकती है जिस पर पानी टिक नहीं सकता ! मानसून की अनिश्चितता से बचने के लिए कई किसान एक साथ दो तरह की फसलें उगाते हैं, जैसे – चावल जो पूरी तरह पानी पर निर्भर है और मक्का जो सूखे में भी पैदा हो सकती है।

वर्तमान स्थिति यह है कि अगली बारिश से पहले अधिकांश गाँवों में गर्मी के महीनों में पानी की कमी हो जाती है। मानसून से कुछ हफ्तों पहले कुँए सूख सकते हैं क्योंकि कुछ महीनों तक लगातार 50 डिग्री सेल्सियस तापमान अपने आप में मौत का पैगाम मालूम पड़ता है। अब मानसून पहले से अधिक फेल होने लगे हैं। ऐसी स्थिति में उन उपायों की जरूरत है जो अधिक रचनात्मक और त्वरित परिणाम देने वाले हों। अतः लीडरशिप में विविधता सुनिश्चित करने के लिए सभी क्षेत्रों से लोगों का आगे आना भी बहुत जरूरी हो गया है।

सेवा मंदिर जैसे संगठनों के पास बहुत अच्छे उपाय, गजब के कार्यकर्ता और प्रेरित लीडर्स हैं जो परिवर्तन लाना चाहते हैं और लाने की क्षमता भी रखते हैं। हमारे आज के लगाए हुए वृक्षों से धरती पर हमारी आने वाली पीढ़ियों को पानी मिल पाएगा। मैं इस विषय पर कितना भी लिखूँ कम है, क्योंकि अधिकांश मानवजाति अपनी सिर्फ आज की जरूरतों को पूरा करने में इस कदर मशगूल है कि उसे इस बात की जरा भी फिक्र नहीं है कि भविष्य में इसके नतीजे दूसरों को भुगतने पड़ेंगे।

मणी देवी

आमोड़ उदयपुर से लगभग 90 किलोमीटर दूर एक छोटी घाटी में एकांत में छुपा एक गाँव है। ऐसा लगता है मानो छोटी–छोटी पहाड़ियों ने इसे दुनिया से छुपने के लिए एक सुकून भरी पनाह दे रखी है। मैं एक प्रभावशाली युवा महिला मणी देवी से मिलने यहाँ आया था जिन्होंने तबाही की कगार पर पहुँच चुके आमोड़ के संरक्षित वन को बचाने में साहसी भूमिका निभाई थी। उनके घर की तरफ बढ़ते हुए मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मैं पास के समुदाय से लाखों मिल दूर निकल आया हूँ।

मणी देवी को उनके साहस, दृढ़ संकल्प और अपने आसपास की दूसरी महिलाओं को प्रेरित करने की उनकी स्वाभाविक क्षमता के लिए जाना जाता है। यह स्पष्ट है कि गाँव की महिलाओं का सम्मान उन्हें प्राप्त है। लेकिन पुरुषों के बीच उन्हें जो दर्जा प्राप्त है वह और अधिक प्रभावित करता है। वे अपने समुदाय की अगुआ हैं और महिलाओं की आने वाली पीढ़ियों के लिए एक अद्‌भुत मिसाल भी हैं। मणी देवी दृढ़ता और सशक्तिकरण का एक ऐसा प्रतीक बन चुकी हैं जिसकी शायद उन्होंने कल्पना भी नहीं की होगी। उनके गाँव के कमलनाथ वन क्षेत्र के संरक्षण के लिए बनाई गई वन सुरक्षा समिति में चुनी जाने वाली वे प्रथम महिला थी और जिस वर्ष सेवा मंदिर ने स्व–सहायता समूह निर्माण की पहल आरंभ की वे आसानी से समूह की अध्यक्ष बन गई। स्व–सहायता समूह का निर्माण महिलाओं के सशक्तिकरण और उन्हें यह सिखाने के लिए किया गया था कि वे किस तरह अपनी व्यक्तिगत आर्थिक स्थिति पर नियंत्रण प्राप्त करें जिससे

बदले में उन्हें बेहतर सामाजिक दर्जा मिले। खास तौर पर इस स्व–सहायता समूह में महिलाओं ने ना सिर्फ इस बात के लिए बैठकें की कि पैसा कैसे बचाया जाए बल्कि उन्होंने अपने परिवार, स्वास्थ्य, विवाह, शिक्षा और भौतिक संसाधनों जैसे कई दूसरे मुद्दों पर भी चर्चा की।

आमोड़ की वन संरक्षण समिति अपने आप में असाधारण है। यह पूरी तरह भौतिक संसाधनों के संरक्षण और विकास के लिए प्रतिबद्ध है। इन वन भूमियों के रखरखाव के लिए समिति ने मणी देवी की लीडरशिप में बेहतरीन काम किया है। आज यहाँ 1300 हेक्टेयर वन भूमि ऐसी है जिसका प्रबंधन और संरक्षण आमोड़ के लोगों द्वारा ही किया जा रहा है। इसमें से, 300 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किसी भी कार्य के लिए पूरी तरह प्रतिबंधित है, यहाँ तक कि आमोड़ के निवासी भी उसका कोई उपयोग नहीं कर सकते। बाकी 1000 हेक्टेयर वन भूमि गाँव वालों के लिए पशु चराने और ईंधन और चारा इकट्ठा करने के लिए अलग रखी गई है। साल में एक बार पूरा समुदाय एक साथ यहाँ आता है और हर एक परिवार अपनी जरूरत के हिसाब से जितना चाहिए उतना ईंधन और चारा इकट्ठा करके ले जाता है। भारत में गाँवों में वन संरक्षण के लिए इस तरह की प्रथाओं का चलन शायद ही कहीं देखने को मिलता हो क्योंकि समुदाय में एकता, दूरदर्शिता और मजबूत लीडरशिप के बिना इतनी विशाल भूमि को अलग रखना बहुत ही मुश्किल है।

वनों में आसपास के गाँव वालों का अनाधिकृत ढंग से आ जाना अक्सर एक गंभीर समस्या होती है। खेद की बात है कि यह मुद्दा उस वक्त और अधिक गंभीर हो जाता है जब कभी–कभी महिलाएँ वन में अनाधिकृत प्रवेश कर वहाँ निगरानी के लिए गश्त कर रहे पुरुषों के लिए समस्या पैदा कर देती हैं। उदाहरण के लिए, पहरेदारों द्वारा आमोड़ में सार्वजनिक भूमि पर पास के गाँव की महिलाएँ जब ईंधन और चारा चुराने की कोशिश करती पकड़ी जाती हैं तो वे अपने गाँव लौटने पर कभी–कभी यह दावा करती हैं कि सजा से बचने के बदले में उनका यौन शोषण किया गया। इससे भी बुरी बात यह है कि यदि उन्हें वहाँ से खाली हाथ लौटना पड़े तो भी वे ऐसे झूठे आरोप लगा सकती हैं ! ऐसे आरोप सच में चारा चुराने से कहीं अधिक नुकसान पहुँचाने वाले हो सकते हैं। यौन शोषण का आरोपी होने के परिणामस्वरूप, विशेष रूप से छोटे ग्रामीण समुदाय में, समुदायों में फूट पड़ सकती है और लोगों के जीवन बर्बाद हो सकते हैं। कुछ समुदायों, जैसे मणी देवी की सक्षम लीडरशिप में आमोड़, ने इस समस्या के हल के लिए निगरानी दल में महिलाओं को शामिल करना शुरू किया है। यह पहल

अनाधिकृत प्रवेश और वृक्षों की अवैध कटाई, विशेष कर पास के गाँवों की महिलाओं द्वारा, की समस्या से निपटने में बहुत अधिक कारगर साबित हुई है।

आमोड़ गाँव के लोगों ने, मणी देवी की लीडरशिप में, वन भूमि की और अधिक अखंडता सुनिश्चित करने के लिए उसे पवित्र धार्मिक स्थल या तपोवन के रूप में भी मान्यता दी। यह वन में अलग–अलग माप के वह भाग होते हैं जो सामुदायिक रूप से रक्षित होते हैं और रक्षा करने वाले समुदाय की धार्मिक भावनाएँ उनसे जुड़ी होती हैं। तपोवन में वृक्षों की कटाई पूरी तरह प्रतिबंधित होती है। गाँव के लोग पूरी वन भूमि के आसपास केसर का छिड़काव करते हैं और वन क्षेत्र के अंदर तीन तपोवनों में अन्य धार्मिक क्रियाएँ संपन्न करते हैं। स्थानीय गाँव वालों के बीच यह पहल बहुत प्रभावी साबित हुई क्योंकि इससे यह आस्था पुनः स्थापित करने में मदद मिली कि जंगल पवित्र होते हैं।

वन तत्काल लाभ प्रदान करने वाले मूल्यवान संसाधन होते हैं। लेकिन, यदि समुदाय दूरदर्शिता के साथ सतत् वन प्रबंधन के विचार को समझते हुए चले तो निश्चित ही भविष्य में वन और अधिक समृद्ध होंगे। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि जब मैं आमोड़ गया तो मैंने पाया कि वहाँ झाडोल के अन्य किसी भी गाँव की तुलना में अधिक फले–फूले पेड़–पौधों के कारण अधिक हरियाली थी। और तो और, ऐसे समय वहाँ इतनी हरियाली थी जब मानसून शुरू भी नहीं हुआ था।

उस दिन हम वहाँ जल्दी पहुँच गए। गाँव की बैठक चल रही थी और हमें उसकी चर्चा का आखरी भाग सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। बैठक में किसान भूमि अधिकारों के विषय में चर्चा करने के लिए इकट्ठे हुए थे। यह देख कर और इसके साथ आसपास के हरे भरे स्वस्थ वातावरण को देख कर तुरंत ही मुझे समुदाय की सक्रिय और एकीकृत ऊर्जा का अहसास हो गया। भले ही यह अतिशयोक्ति लगे, लेकिन मैं यह कहूँगा कि जहाँ एक समृद्ध वन है वहाँ आमतौर पर एक स्वस्थ समुदाय होता है।

बैठक समाप्त होने पर मणी देवी और दो अन्य महिलाएँ उनके गाँव के बीचों बीच एक बड़े वृक्ष के नीचे हमारे साथ बैठी। पहले इंटरव्यू में उन्होंने मेरी ओर नहीं देखा और अपना चेहरा पूरी तरह ढांके रखा। उनके साथ बैठी दो महिलाएँ उनकी अंगरक्षक मालूम पड़ रही थी। इससे मुझे उनके संदेह का अहसास हुआ। वे मेरे अनुवादक की बात ही समझ पाती थी। कुछ समय बाद

एक अन्य इंटरव्यू में उस हँसती, मुस्कुराती और अच्छी खासी बातूनी मणी देवी से मेरा परिचय हुआ जिसके बारे में मैंने बहुत सुन रखा था।
तबाही की कगार पर पहुँच चुकी आमोड़ की सार्वजनिक भूमि को बचाने में अभिन्न भूमिका निभाने के कारण मणी देवी को एक लीडर के रूप में मान्यता मिली। अमोड़ में यह सामान्य प्रथा है कि जब पास के गाँवों में शादियाँ होती हैं तब महिलाएँ घर पर ही रहती हैं और सिर्फ पुरुष ही उनमें शामिल होने के लिए जा सकते हैं। ऐसे ही एक अवसर पर एक बार एक साथ चार शादियाँ होने के कारण उत्सव का वातावरण था। स्वाभाविक है गाँव में कोई आदमी नहीं था, सभी बाहर गए हुए थे। विश्वास नहीं होता कि उस रात ही सार्वजनिक भूमि के वन में आग लगनी थी। घर से यह आग दिखाई देने और उसकी गंध आने पर मणी देवी के सामने विकल्प चुनने का प्रश्न पैदा हो गया। घर के अंदर ही रहना उनका सामाजिक कर्तव्य था जिससे वे भी वाकिफ थी। उनके सामने दुविधा उत्पन्न हो गई। एक विकल्प यह था कि वे तब तक इंतजार करें जब तक गाँव के आदमी पास के गाँव से वापस नहीं लौट आते। इससे गाँव की सार्वजनिक भूमि खतरे में पड़ सकती थी। दूसरा विकल्प यह था कि वे सामाजिक शिष्टाचार का बंधन तोड़कर हिम्मत के साथ आग बुझाने के प्रयास में लग जाएँ। उनके सामने वैसी ही स्थिति थी जैसी टूटा हुआ पुल सामने आ जाने पर मेरे सामने थी। या तो वे वहीं रुकी रहती जहाँ वे थी या फिर एक लक्ष्य हासिल करने के लिए एक भयानक और संभवतः बहुत ही खतरनाक स्थिति से जूझने का प्रयास करती। एक टूटा हुआ पुल और वाहन की सुविधा छोड़कर एक नए और संभवतः खतरनाक स्थान को पैदल पार करना, हालाँकि भयावह हो सकता है, लेकिन हमारे लिए अपने कार्य में आगे बढ़ने के लिए यह जरूरी था। यदि हम डर और घबराहट के आगे हार मान लेते तो कभी कहीं नहीं पहुँच पाते।

मणी देवी यह भली–भाँति समझ गई कि उन्हें, ना सिर्फ एक व्यक्ति के रूप में बल्कि समुदाय के प्रति अपने दायित्व के कारण, कुछ करने के लिए बिना हिचके कदम आगे बढ़ाना ही होगा। समुदाय के दूसरे सदस्यों को सतर्क करने के लिए उन्होंने एक बड़ा ढोल बजाया। जिन्होंने खतरे का यह संकेत सुना उन्होंने सब तरफ यह बात फैला दी और लोग कुदरत की सबसे खतरनाक ताकतों में से एक इस आग के खिलाफ देर रात लड़ने के लिए इकट्ठा होने लगे। शारीरिक रूप से सक्षम सभी महिलाएँ और बच्चे इकट्ठा हो कर नीचे झुके हुए ताड़ के पेड़ों के पत्ते काटकर उनसे आग की लपटें बुझाने लगे। आधी रात के बाद तक उस भयानक आग से लड़ कर वे ना सिर्फ उसे उसे बुझाने में वे सफल रही बल्कि मणी देवी

गाँव के औरतों और बच्चों को इकट्ठा कर उनकी संगठित शक्ति जुटाने में भी सफल रही। उनकी व्यक्तिगत दृढ़ता और अपने समुदाय को संगठित कर पाने की क्षमता के कारण आमोड़ और आसपास के गाँवों की एक ऐसी आपदा से रक्षा हो सकी जिससे कितना नुकसान होता यह अनुमान लगाना ही मुश्किल है।

कोई आसानी से यह समझ सकता है कि जंगल की आग बुझाने का कार्य मणी देवी को दूसरों से अलग बनाता है। लेकिन सिर्फ यह एक मात्र काम ही उन्हें दूसरों से अलग नहीं बनाता। हालाँकि, ऐसा लगता है कि हमारा अपनी कार छोड़कर टूटा हुआ पुल पैदल पार करने का काम परिस्थिति के अनुसार खुद को ढ़ालने और खतरनाक परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार रहने के महत्व को रेखांकित करता है। लेकिन वास्तव में ऐसा करना नहीं बल्कि ऐसा करने का निर्णय लेना इस महत्त्व को रेखांकित करता है। मणी देवी ने एक विकल्प चुना। उनका वह काम करने का निर्णय लेना अपने आप में पर्याप्त था। वे आमोड़ की सार्वजनिक भूमि को बचा पाती या नहीं यह बाद में मालूम चलना था, लेकिन उन्होंने उन खूबियों को दर्शा दिया जो उन्हें एक दृढ़ और सक्षम लीडर बनाती हैं। वे खुद को परिस्तिथियों के अनुसार ढ़ालना जानती हैं, साहसी हैं और आत्मविश्वास से भरी हुई हैं और रास्ते में आने वाली रुकावटों से विचलित नहीं होती।

शांत बने रहना

भारत में यात्रा करना थकान भरा हो सकता है। कई बार मैंने बस में खुद को बुरी तरह ठूँसा हुआ पाया, ऐसा महसूस होता था जैसे मेरी टांगें जवाब दे जाएँगी, लेकिन सब तरफ से पड़ने वाला सहयात्रियों का दबाव मुझे थामे रखता था जिससे मैं उसी स्थिति में बना रहता था। घिरा हुआ होने का यह एहसास संघर्ष और निकल भागने की प्रवृत्तियाँ एक साथ जगा सकता है, जितना मन करता था कि मैं बस से निकल भागु उतना ही मन यह भी करता था कि बस में रुक कर हवा पाने के लिए लोगों को दूर धकेलूँ। निश्चित ही, शांत बने रहना ही एक मात्र उपाय था। एक जख्मी अंगूठे की तरह तन कर खड़े रहने के कारण कभी–कभी लोगों के लिए मैं हँसी का पात्र होता था और उनकी प्रतिक्रिया अक्सर मेरी परेशानी को कम कर देती थी, लेकिन अधिकतर यह काम मेरे मन में ही हुआ करता था। यह अनुभव मेरे लिए इस तरह के अवसरों पर दृढ़ता और अपना मानसिक संतुलन बनाए रखने में बहुमूल्य साबित हुआ। यात्रा चाहे लम्बी, थकाने और कुंठित करने वाली हो तो भी मैंने हमेशा यही पाया कि वह करने योग्य होती थी। और, जब कभी अपनी भावनाओं के आगे हार कर, मैं कोई भीड़ भरी बस छोड़ देता और सड़क के किनारे खड़ा अगली बस का इंतजार करता तो यही पाता कि वह भी उतनी ही भरी हुई है। तब सोची गई यात्रा से अलग होने के कारण मेरी यात्रा मुझे और अधिक तकलीफदेह मालूम होती, इसलिए अपने आसपास की परिस्थितियों के बावजूद डटे रहना ही हमेशा बेहतर है। इससे यह होगा कि मैं जब मैं अपने गंतव्य पर पहुँचूँगा तो मुझे वह कहीं अधिक महत्वपूर्ण और सार्थक मालूम पड़ेगा।

कंकू बाई

उस दिन मैं जिस टाटा कार में जा रहा था वह परंपरागत फूस के छप्पर वाले एक छोटे नीले भवन के सामने रुकी जो कि गाँव का एक स्टोर था। हम जिस वक्त वहाँ पहुँचे स्कूल छूट ही रहा था। नीले रंग का गणवेश पहने बच्चे स्टोर के पास इकट्ठे हो रहे थे। जैसे ही मैं स्टोर की तरफ मुड़ा कुछ बच्चे घबरा कर भागने लगे, कुछ अपने काम छोड़ कर मुझे घूरने लगे, अन्य बच्चे मुस्कुराए और उत्साहित होकर हाथ लहराने लगे, जबकि कुछ बच्चे मेरे पास तक आए और बोले, " नमस्ते जी !''

मैं बच्चों की इस तरह की मिलीजुली प्रतिक्रिया का अभ्यस्त था। ऐसे मौकों पर मैं अक्सर उन बच्चों की मुस्कुराहट को अपने कैमरे में कैद कर लिया करता था जो अपनी तस्वीर लेने की मंजूरी देने का साहस दिखाते थे। मैंने यह पाया कि कैमरा भारत में दो लोगों के बीच जमी बर्फ हटाने का काम बेहतरीन ढंग से कर देता है। खास कर बच्चों के मामलों में, जहाँ अपेक्षाकृत भाषा की रुकावट कहीं अधिक होती है। पहली बार खुद का फोटो या वीडियो देखने पर एक बच्चे की अनोखी प्रतिक्रिया देखने लायक होती है। उस एक पल में, मैं खुद को उस जादूगर की तरह महसूस करता था जिसकी सारी कलाकारी देखने के बाद दर्शक पहले ही झटके, संदेह, अचंभे, जिज्ञासा और हैरानी से भरे हुए हों और उसी पल वह अपना आखरी और सबसे आश्चर्यजनक करतब दिखा दे। बचने की व्यवस्था नहीं हो तो जल्दी ही आप खुद को फोटो खींचने की गुजारिश करते बच्चों के झुण्ड में घिरा पाएँगे, जो एक ऐसी मुश्किल स्थिति है जिससे छुटकारा पाना असंभव है। निःसंदेह, यहाँ भी, शांत बने रहना ही एक मात्र उपाय है !

जिस लीडर से मिलने मैं आया था, वे थी मुस्कुराते चेहरे वाली कंकू बाई। जैसे ही हम स्टोर की ओर बढ़े उन्होंने मेरा और मेरे साथी का बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया। स्टोर में उन्होंने हमें खाट, परंपरागत ढंग के प्रचलित पलंग, पर बैठने का इशारा किया। सीधे मुद्दे पर आते हुए, हमने तुरंत ही उनसे यह जानने के लिए बातचीत शुरू की कि वे कैसे अपने गाँव की सरपंच बनी। वे हमसे बात करते वक्त दुकान का काम भी करती जा रही थी जिसमें थोड़ी–थोड़ी मात्रा में समान रखा गया था, जैसे–हाथ से बनी छोटी सिगरेट, सुपारी, अखरोट, बादाम आदि, पटाखे और शक्कर।

1995 में, जब वे अपने बीस के दशक में ही थी, कंकू बाई को झाडोल प्रखण्ड़ में स्थित उनके गाँव मोहम्मद फलासिया का सरपंच चुना गया। उस वक्त, वे बताती हैं, अनुभव की कमी के कारण उन्हें बहुत संघर्ष करना पड़ा। फिर भी, वे इससे विचलित नहीं हुई और उन्हें विश्वास था कि वे सीख कर सफलता प्राप्त कर सकती हैं। इस महत्वपूर्ण पद तक पहुँचने में उनकी यह सफलता उनकी स्वाभाविक जिज्ञासा, चीजों को जल्दी समझ लेने की क्षमता और उनके दृढ़ संकल्प को प्रतिबिंबित करती है। तुरंत ही मैं यह पूरी तरह जानने के लिए आतुर हो उठा कि वे सरपंच कैसे बनी।
''आपने किस उम्र में स्कूल जाना शुरू किया?'', मैंने पूछा।

''मैंने बारह वर्ष की उम्र से सेवा मंदिर के रात्रिकालीन स्कूल में जाना शुरू किया। हालाँकि, आधिकारिक तौर पर कक्षा में नाम दर्ज कराने के हिसाब से मैं बहुत छोटी थी। जब मैं चौदह वर्ष की हुई तब ही आधिकारिक तौर पर मैं अपना नाम दर्ज करा सकी।'', उन्होंने जवाब दिया।

"बारह वर्ष के अधिकांश बच्चे दिन भर के लम्बे थका देने वाले काम के बाद जाकर कक्षा में नहीं बैठना चाहेंगे, विशेष कर तब जब परिवार के लिए ईंधन और चारा लाने के लिए वे बेहद दूर तक पैदल भटके हों। आपको किस कक्षा में जाने की प्रेरणा किस चीज से मिली?'', मैंने पूछा।

उन्होंने जवाब दिया, "मुझे सीखना पसंद था। छात्र यह जानने के लिए नए–नए खेल और प्रतियोगिताएँ ईजाद करते थे कि कौन ज्यादा तेजी से पढ़ सकता है या गणित का सवाल पहले हल कर सकता है। मुझे यह खेलना वाकई मजेदार लगता था।"

"क्या आप यह सोचती हैं कि इस तरह के प्रतियोगिता भरे माहौल ने आपको समुदाय में और ज्यादा सक्रिय होने के लिए प्रोत्साहित किया?", मैंने पूछा।

"हाँ, मैं यह मानती हूँ कि उस तरह के खेलों और प्रतियोगिताओं ने मुझे और अधिक कठोर परिश्रम करने के लिए प्रेरित किया और समुदाय में ऊँचे स्तर पर काम करने का आत्मविश्वास प्रदान किया", उन्होंने कहा।

कंकू बाई से यह जान कर कि कैसे दिन भर खेतों और जंगल में कड़ी मेहनत करने के बाद शाम को वे स्कूल जाती थी, मेरी आँखों के सामने तेज गर्मी के थपेड़ों के बीच ठसाठस भरी बस में मेरी यात्रा का दृश्य घूम गया, जिससे मैं घबरा जाता था। कंकू बाई को ना जाने कितनी बार ऐसी ही परेशानी का सामना करना पड़ा होगा, लेकिन वे आगे बढ़ती रही, जूझती भी रही, उस बस को पकड़ने के लिए जिससे मैं अक्सर दूर भागना चाहता था। तब उन्हें इस बात का अहसास भी नहीं था कि उनकी सीखने की यह इच्छा और यह दृढ़ संकल्प ही आगे चल कर उन्हें समुदाय के आज के सबसे अधिक सम्मानित, प्रभावशाली और प्रमुख व्यक्तियों में स्थान दिलाने की राह पर ले जाएँगे।

कंकू बाई का रात्रिकालीन पाठ्यक्रम पूरा होने के बाद जल्दी ही उन्हें यह महसूस होने लगा कि उनके प्रति समुदाय के नजरिये में बदलाव आने लगा है।

''अब वे लोग मुझे एक शिक्षित और सक्षम महिला के रूप में देखने लगे'', उन्होंने मुझे बताया।

उन्होंने समुदाय में बुजुर्गों के साथ बातचीत में भाग ले कर, जाति की पंचायत बैठकों या समुदाय की बैठकों में भाग ले कर और सेवा मंदिर की अन्य गतिविधियों के माध्यम से और अधिक सीखने का क्रम जारी रखा। उनका समुदाय उन पर शीघ्र ही एक शिक्षक की तरह इतना अधिक यकीन करने लगा कि उन लोगों ने कंकू बाई को बताए बिना सेवा मंदिर से यह अनुरोध किया कि उन्हें उनका शिक्षक बना दिया जाए। यह अनुरोध मिलने के कुछ ही समय बाद सेवा मंदिर ने कंकू बाई का इंटरव्यू लिया और तुरंत ही उन्हें अनुदेशिका (आधिकारिक रात्रि कालीन प्रशिक्षक) का पद प्रदान किया। कंकू बाई के लिए यह एक बड़ा सम्मान था।

महज सोलह साल की उम्र में कंकू बाई इलाके की एक मात्र महिला प्रशिक्षक बन गयी। प्रशिक्षक बनने का एक मुख्य और महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि कंकू बाई नियमित रूप से प्रशिक्षण के लिए गाँव से बाहर जाने वाली गिनीचुनी महिलाओं में से एक हो गयी। इस साधारण सी प्रतीत होने वाली बात ने जीवन के प्रति कंकू बाई के दृष्टिकोण को व्यापक बनाया। अपने समुदाय के बाहर आत्मनिर्भर बने रहने में समर्थ होने से उनमें आत्मविश्वास का संचार हुआ। उन्होंने शीघ्र ही बिना संकोच यह बताया कि जब वे अपने गाँव से दूर होती थी तब किस तरह दूसरे प्रशिक्षक उनके लिए मददगार और हौसला बढ़ाने वाले साबित हुए। एक शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका से उन्हें लगाव था, हालाँकि एक सौ रुपए मासिक (लगभग दो डॉलर मासिक) की मामूली सी तनख्वाह पर सिर्फ शाम के समय एक बार में कुछ ही महीने यह कार्य होता था।

सन 1992 में, सेवा मंदिर ने अपने महिला विकास कार्यक्रम में कंकू बाई को एक क्लस्टर वर्कर के रूप में काम करने के लिए कहा। क्लस्टर वर्कर की जिम्मेदारी होती है उसे दी गयी किसी एक ग्राम पंचायत में कार्यरत अनेक महिला समूहों को महिला सशक्तिकरण के कार्य में सहायता प्रदान करना। एक ग्राम पंचायत स्थानीय शासन की सबसे निचली इकाई होती है जिसमें प्रत्येक गाँव की जनसंख्या के आधार पर एक या एक से अधिक गाँव शामिल हो सकते हैं। लीडरशिप की उनकी स्वाभाविक क्षमता और अपने गाँव में उन्हें प्राप्त सम्मान के कारण इस तरह की परियोजना के लिए वे एक आदर्श उम्मीदवार साबित हुई। उन्होंने शिक्षण शिविरों, स्वास्थ्य अभियानों और महिला जागरूकता समूहों का सफल संचालन संभव बना कर यह दर्शा दिया कि वे एक प्रभावी, दयालु और विश्वसनीय लीडर थी।

तीन वर्षों बाद, 1995 में, वे सरपंच चुनी गयी और राजनीति के क्षेत्र में उनका प्रवेश हुआ जिसमें उन्हें अनेक उल्लेखनीय सफलताओं के साथ अनेक निराशाओं से रूबरू होना था। मन में यह विचार उठना स्वाभाविक है कि एक ऐसे समाज में कोई महिला सरपंच कैसे हो सकती है जिसमें महिलाएँ दोयम दर्जे की नागरिक और पुरुषों से कमतर समझी जाती हों ! यह सोचना लगभग असंभव है कि ऐसा हो सकता है। और ऐसा ही होता भी यदि प्रत्येक तीसरा सरपंच महिला होने का कानूनी प्रावधान नहीं होता। दुर्भाग्यवश, राजनीतिक क्षेत्र में परंपरागत रूप से पुरुष प्रधानता की मानसिकता चली आ रही थी जिसे तोड़ना जरूरी था। इसलिए महिलाओं का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करते हुए उनके सशक्तिकरण और समाज में उनका दर्जा ऊँचा उठाने के लिए 1992 में

यह कानून बनाया गया। हालाँकि, यह कानून अब अस्तित्व में है, लेकिन इसके नतीजे हमेशा वैसे नहीं होते जैसी उम्मीद की जाती है। उदाहरण के लिए, अनेक मामले ऐसे हैं जिनमें चुनी गई महिलाएँ दिखावे की लीडर साबित होती हैं क्योंकि उनके पति उनका इस्तेमाल कठपुतलियों की तरह करते हैं या उनके सभी वास्तविक निर्णय कोई अन्य प्रभावी पुरुष लेते हैं। लेकिन, सौभाग्यवश कंकू बाई के मामले में ऐसा बिल्कुल नहीं था !

आरंभिक दो वर्षों के अनुभव उनके लिए अत्यंत शिक्षाप्रद रहे और एक उप सरपंच एवं सचिव का साथ उनके लिए वरदान साबित हुआ जो सम्मानपूर्वक उन्हें सलाह देते और उनकी सहायता भी करते थे। कंकू बाई ने जल्दी ही यह भाँप लिया कि उनकी शक्ति संख्या में है। पुरानी बातें याद करते हुए उन्होंने बताया कि जब उन्हें जिला स्तरीय सरकारी कार्यालय या उच्च अधिकारियों से चर्चा के लिए जाना होता था तब किस तरह वे आसपास के गाँवों से चार महिला सरपंचों को साथ ले कर जाती थी। सरपंच के रूप में उनके कार्यकाल के आरंभिक दौर में इस तरह की मित्रता बहुत सहायक रही। जो कुछ वे करती थी उसमें दूसरों को साथ ले कर चलने की उनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति निःसंदेह उनकी नेतृत्व क्षमता का मौलिक गुण है।

सरपंच चुने जाने के बाद शीघ्र ही कंकू बाई ने गाँव में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र की आवश्यकता महसूस की। उन्होंने तत्परतापूर्वक स्थानीय अधिकारी के सामने आवेदन प्रस्तुत किया और स्वास्थ्य केंद्र बनाने की स्वीकृति प्राप्त की। जब पड़ोसी गाँव के सरपंच ने कंकू बाई की योजना के बारे में सुना तो उसने तय किया कि वह केंद्र उसके गाँव में आये। और तो और, वह सत्ताधारी राजनीतिक दल का एक सदस्य भी था, जबकि कंकू बाई विपक्षी दल से जुड़ी हुई थी। उसने राज्य के राज्यपाल से संपर्क किया और शीघ्र ही पूरी परियोजना अपने गाँव में स्थानांतरित कराने में कामयाब हो गया। अगले डेढ़ साल कंकू बाई ने अदालत में केस लड़ने में बिताये। हालाँकि, अंत में केस में उनके गाँव की हार हुई और स्वास्थ्य केंद्र उनके हाथ से जाता रहा। इस घटना से कंकू बाई इतनी आहत हुई कि उन्हें अस्पताल में भर्ती करना पड़ा।

यह केस कई मायनों में घिनौना है, और इस बात का एक पुख्ता उदाहरण भी है कि किस तरह भ्रष्ट तौर–तरीकों के चलते लोग अपने जायज हितों के संरक्षण के लिए न्याय प्रणाली का उपयोग कर पाने में असफल रहते हैं। फिर भी, तीन साल बाद जब वह दल सत्ता में आया जिससे कंकू बाई जुड़ी हुई थी तब उन्होंने

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र बनाने और मूल परियोजना अपने गाँव में संचालित करने के लिए नयी स्वीकृति प्राप्त की। यह उनके साहस, दृढ़ निश्चय और समर्पण का प्रतीक है। यह वाकया याद करते हुए कंकू बाई बताती हैं कि स्वास्थ्य केंद्र का निर्माण उनकी सबसे अधिक फलदायी परियोजनाओं में से एक था। यह बताते हुए वे हँसी कि स्वास्थ्य केंद्र बन जाने के कई वर्षों बाद वे सबसे कहती थी, "हम केस हार गए फिर भी देखिये हमारे गाँव में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र है।"

कंकू बाई ने बताया कि सरपंच के रूप में भ्रष्टाचार का सामना करना उनके लिए कितना कठिन था। यह बताते हुए उनका दर्द साफ झलकता था कि कई बार "काम करने के लिए देने" के लिए उन पर दबाव डाला गया। मैंने उनसे पूछा कि यदि वे कुछ अतिरिक्त माँगने वालों की माँग पूरी करने से इनकार कर देती तो क्या होता। उनका जवाब सरल और सटीक था, "यदि आप उच्च अधिकारियों को कमीशन नहीं देते तो वे आपकी मदद नहीं करेंगे। यदि आप कोई स्वीकृति या चेक चाहते हैं तो वे आपको नहीं देंगे, और यहाँ तक कि वे जानबूझ कर आपके इलाके में काम में देरी कर सकते हैं।'' यह स्वास्थ्य केंद्र के मामले में कंकू बाई के अनुभव से स्पष्ट रूप दिखायी भी देता था जिसमें उन्होंने भ्रष्ट तरीकों में भागीदारी से इनकार कर दिया था।

एक चुने गये लीडर के रूप में व्यक्ति को कठिन निर्णय लेने पड़ते हैं। कुछ मामलों में कंकू बाई अपने समुदाय के हितों के संरक्षण और बेहतरी की खातिर सही और गलत के बारे में अपनी व्यक्तिगत सोच के विरुद्ध भी गयी। प्रतिदिन उन्हें इस प्रश्न से जूझना पड़ता था कि वे इस वृहत्तर बुराई के विरुद्ध संघर्ष करते हुए खुद को और अपने समुदाय को इस समूची प्रक्रिया से अलग–थलग करने का खतरा मोल लें या "उन्हीं के नियमों" के सहारे खेलते हुए अपने समुदाय के लिए अधिक से अधिक काम कर लें। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि कंकू बाई और उनके जैसे अनेक लोग समुदाय की बेहतरी के खातिर अपने नैतिक मूल्यों के साथ समझौता करने को बाध्य हो जाते हैं। हालाँकि, मैं खुद को यह प्रश्न करने से नहीं रोक सकता कि क्या ऐसी माँगों के सामने झुकना भ्रष्टाचार की संस्कृति को और बढ़ावा नहीं देता। भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई कहाँ शुरू होनी चाहिए? क्या कंकू बाई जैसे लीडर्स को खुद इस बात की जिम्मेदारी लेनी चाहिए कि वे भ्रष्ट अधिकारियों की इन नाजायज माँगों को ठुकरा दें, या उच्च अधिकारियों की ओर से इस भ्रष्टाचार के खिलाफ पहल होनी चाहिए?
कंकू बाई ने एक बार कहा, "एक अकेला व्यक्ति भ्रष्टाचार की समस्या का सामना नहीं कर सकता। सब मिल कर प्रयास करें तो ही इस बारे में कुछ किया जा

सकता है और स्थिति पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।'' फिर भी, मुझे ताज्जुब है कि यह एकता आयेगी कैसे? इसके लिए क्या सिर्फ मोहम्मद फलासिया के ग्रामीणों की ही जरूरत? या झाडोल प्रखण्ड़ में स्थित अनेक गाँवों के निवासियों के एकजुट होने की जरूरत है?

इन जैसे मामलों में भ्रष्टाचार के खिलाफ किस तरह लड़ा जाना श्रेष्ठ रहेगा यह प्रश्न ठीक वैसा ही है कि पहले मुर्गी आयी या अंडा। क्या पहले लोग रिश्वत माँगना बंद करें, या पहले देने वाले रिश्वत देना बंद करें? वास्तव में यह मिलजुला मामला है, जब लोग रिश्वत माँगना बंद करेंगे तब लोग देना बंद करेंगे, और इसी तरह जब लोग रिश्वत देना बंद करेंगे तब लोग माँगना बंद करेंगे। इसलिए, कंकू बाई के मामले में, हालाँकि वे यह स्वीकार करती हैं कि वे रिश्वत की माँग के सामने झुकी, किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि खुद उन्होंने रिश्वत नहीं ली। अतः यह कहा जा सकता है कि उन्होंने रिश्वतखोरी की प्रणाली को बढ़ावा नहीं दिया और भ्रष्टाचार के प्रचलित तौर–तरीकों में उनका शामिल ना होना यह दर्शाता है कि वे उसके खिलाफ थी। यदि कंकू बाई जैसे और लीडर चुन कर सत्ता में आएँ तो इसका एक गहरा प्रभाव पड़ेगा। यह शायद एक ऐसी तरंग उत्पन्न करने में सफल हो जो आगे चल कर सम्पूर्ण भ्रष्टाचार की संस्कृति के खिलाफ एक बड़ी लहर का रूप धारण कर ले।

कंकू बाई को अपना धीरज बनाए रखना पड़ा, और व्यथित कर देने वाले एक ऐसे अनुभव से गुजरना पड़ा जिसके विषय में वे कुछ खास नहीं कर सकती थी। अपने धीरज और विश्वास के बल पर अंततः वे अपने गाँव में स्वास्थ्य केंद्र बनाने में कामयाब रही। इससे मुझे इस बात का अहसास हुआ कि हमें अपनी मंजिल तक पहुँचने के लिए कई बार कठिन और असुविधाजनक यात्राओं से गुजरना ही पड़ता है। यह उन यात्राओं में सहन की गयी तकलीफें ही हैं जो हमारी सफलता या उपलब्धि को इतना सुखद बनाती हैं। कंकू बाई के मामले पर गौर करें तो यह बात समझी जा सकती है। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि उनके गाँव में एक स्वास्थ्य केंद्र की जरूरत थी। उन्होंने इसे कभी नहीं त्यागा और इतनी लम्बी कठिन मुहीम के बाद इसका निर्माण किया। इससे उनका सफलता का बोध और अधिक बढ़ गया। हालाँकि, उनका सफलता का बोध अपने आप में महत्वपूर्ण है, रास्ते में आने वाली चुनौतियों के बीच शांत बने रहने की उनकी क्षमता के कारण वे अपने समुदाय के लिए महान और अमूल्य उपलब्धियाँ प्राप्त करने में सफल रहीं।

GJ.9.B.1896
TATA
TATA

रचनात्मकता के अवसर

मैं जितने भी देशों के सम्पर्क में आया, उनमें से भारत उन देशों में से एक है जिनकी संस्कृति सबसे अधिक रचनात्मक है। रास्ते अपने आप में रचनात्मकता के प्रत्यक्ष अवसर हैं। इतनी अधिक जनसंख्या वाले देश में बड़ी संख्या में लोगों को यथासंभव कुशलतापूर्वक एक साथ एक से दूसरी जगह पहुँचाना प्राथमिकता सूची में ऊपरी क्रम पर आता है। उदयपुर आने के बाद अधिक समय नहीं लगा जब मैं एक ऐसी बस के सम्पर्क में आया जिसमें चौंका देने वाली हद तक इतनी अधिक सवारियाँ थी कि यकीन करना मुश्किल था। यदि कैबिन के अंदर या छत के ऊपर एक इंच भी और जगह होती तो एक और सवारी को बैठा दिया जाता। यदि किसी भी तरह संभव होता तो बस के पीछे या बाजू में किसी सवारी को और लटका दिया जाता। लेकिन सिर्फ यही ऐसे वाहन नहीं हैं जिनका इस तरह इस्तेमाल किया जाता है। जीप, ट्रैक्टर, मोटरसाइकिल, स्कूटी, और यहाँ तक कि साइकिलें भी अक्सर उनकी क्षमता से कहीं अधिक लोगों से भरी रहती हैं। इसे ही आवश्यकता का हावी होना कहा जा सकता है, रचनात्मक और अविश्वसनीय उपाय या समाधान। इतना होने पर, एक टूटीफूटी कमजोर साइकिल पर एक पूरे परिवार को एक साथ जाता देखना डराने वाला होता है! निश्चित ही, मैं इसे असुरक्षित का दर्जा देना चाहूँगा और, हालाँकि संभव है यह सचमुच असुरक्षित हो भी। सबके लिए दूसरा विकल्प पैदल चलने का है जो उनकी यात्रा को बहुत लम्बी और कठिन बना देगा।

केशुलाल खेर

केशुलाल खेर के अतीत की परतें खुलने पर यह अहसास होता है कि वह जितना अद्भुत है उतना ही प्रभावशाली भी है। उनकी समस्त उपलब्धियों, पुरस्कारों, और नव–प्रवर्तनशील उद्यमी उपक्रमों के बारे में सुनना अपने आप में एक अनूठा अनुभव है। उनके धीमे और बहुत निश्चिन्तता से काम करने के तौर–तरीके तुरंत ही उनके भीतर एक कलाकार की मौजूदगी की पुष्टि कर देते हैं। वे खुद को एक लोक–कलाकार मानते थे और उनके हावभाव और बोलने का लहजा एक लोक–कलाकार की छवि से पूरी तरह मेल खाता था। मुझे यकीन है कि उनके भीतर मौजूद कलाकार के कारण ही मैं और मेरा साथी तुरंत ही उनके साथ सहज महसूस करने लगे। कुछ अभिव्यक्त करने को आतुर उनकी भौंहे और जोश से भरी उनकी हस्त–मुद्राएँ जादुई नृत्य जैसा समां बांध रही थी और ऐसा महसूस हो रहा था जैसे उनकी प्रत्येक भावभंगिमा किसी नाटक का दृश्य है। उनका शांत, सहज, राजसी व्यक्ति की तरह तकियों के ढ़ेर पर आधे बैठे आधे लेटे हुए आराम फरमाने का अंदाज देखकर मुझे ऐसा लगा कि मैं किसी महान शिल्पकार की मौजूदगी में बैठा हुआ हूँ। उनके हास्यबोध से ना सिर्फ उनका बल्कि उनके आसपास मौजूद सभी लोगों का चेहरा चमक उठता था। अक्सर, ऐसे मौकों पर, एक उदासी की भावना मुझमें घर कर जाती थी कि क्या शब्दों के माध्यम से मैं कभी किसी भी तरह उन जैसे व्यक्ति के साथ न्याय कर सकूँगा?

यह उनके भीतर मौजूद कलाकार ही है जिसने उन्हें सामाजिक समस्याओं, राजनीतिक दुर्दशा, और विकास से जुड़े मुद्दों पर काम करने के लिए प्रेरित किया और इसके लिए समर्थ और सशक्त बनाया। उनका मानना है, हालाँकि बैठकें

और भाषण विकास से जुड़े मुद्दों पर चर्चा करने के सबसे आम तरीके हैं, अधिकांश लोग इसमें बोरियत महसूस करते हैं और इसलिए इनमें रूचि नहीं लेते। इस विचार ने उन्हें अधिक रचनात्मक ढंग, जैसे –सांस्कृतिक कार्यक्रमों, कठपुतलियों के खेल, नाटक, और संगीत के माध्यम से जन–जागरूकता पैदा करने के लिए प्रेरित किया। उदाहरण के लिए, उनकी एक नाटक मंडली थी जिसके साथ वे भारत भर के विभिन्न समुदायों में जाकर नाटक और संगीत के माध्यम से सामाजिक और विकास से जुड़े मुद्दे उठाते थे, जैसे –टीकाकरण, मद्यपान निषेध और युवाओं से जुड़े मुद्दे।

एक युवक के रूप में, वे हमेशा सांस्कृतिक गतिविधियों, शिक्षा और खेलकूद जैसे– फुटबाल और कबड्डी के प्रति स्वाभाविक आकर्षण महसूस करते थे। आरंभ में उनके माता–पिता उन्हें स्कूल भेजने के पक्ष में नहीं थे। अक्सर ऐसा समझा जाता है कि परिवार में काम करने वाले और दो हाथ होना ज्यादा महत्वपूर्ण और जरूरी है। शिक्षा प्रणाली से दूर रहे उनके माता–पिता के लिए अपने बच्चे को स्कूल भेजने से होने वाले फायदे समझना मुश्किल हो सकता है। केशुलाल के मामले में, वे स्कूल जाने के अपने निर्णय पर दृढ़तापूर्वक कायम रहे और खुद ही अपने माता–पिता को समझाने के प्रयास में तब तक लगे रहे जब तक वे उन्हें स्कूल भेजने के लिए राजी नहीं हो गए। हालाँकि, दुर्भाग्यवश, स्कूल ही वह पहला स्थान रहा जहाँ केशुलाल को पहली बार जातीय भेदभाव का सामना करना पड़ा। एक जाति विशेष से होने के कारण उन्हें उस मटके से पानी नहीं पीने दिया जाता था जिससे ऊँची जाति वाले पानी पीते थे। यदि वे पानी पीना चाहते तो उन्हें किसी अन्य जाति के लड़के से पानी देने के लिए कहना पड़ता था, और तब भी उन्हें दोनों हथेलियाँ मिलाकर उनमें पानी लेकर (चुल्लू भर कर) पीना पड़ता था। आप यकीन नहीं कर सकते कि भारत में यह कितना आम तरीका है। मैं खुद को यह सोचने से नहीं रोक पाता कि इस किताब में वर्णित लोगों में से ऐसे कितने व्यक्ति होंगे जिन्हें महज उनकी जाति के आधार पर अस्पृश्य (अछूत) मान कर अपने आप समाज के लिए महत्वहीन मान कर नकार दिया गया होगा। जबकि सच्चाई यह है कि वे भी एक अद्भुत प्रतिभावान व्यक्ति हैं जो भारत में विकास से जुड़े मुद्दों पर संघर्ष में अग्रिम पंक्ति के योद्धाओं की तरह लड़े हैं। और बिना किसी संदेह के मैं यह कह सकता हूँ कि सेवा मंदिर जिन समुदायों के बीच काम कर रहा है वे इन्हीं व्यक्तियों के कारण उन्नति की राह पर अग्रसर हुए हैं।

सामुदायिक विकास के कार्य में केशुलाल का प्रवेश राजस्थान विद्यापीठ नामक एक छोटे संगठन के माध्यम से हुआ। राजस्थान विद्यापीठ एक समुदाय आधारित संगठन है जो उदयपुर और आसपास के इलाकों में रहने वाले समुदायों को शिक्षित करने पर ध्यान देता है। इस संस्था में एक शिक्षक के रूप में काम करते हुए केशुलाल प्रौढ़ व्यक्तियों को अपने नाम लिखना और हस्ताक्षर करना सिखाते थे। इसके परिणामस्वरूप आगे चलकर वे गाँवों में साक्षरता दर बढ़ाने के उद्देश्य से संचालित एक चलित पुस्तकालय में काम करने लगे जिसमें वे गाँवों में पुस्तकें ले जाते थे। शीघ्र ही उनके मन में यह सवाल उठा कि राजस्थान विद्यापीठ सिर्फ शिक्षा पर ही क्यों ध्यान केंद्रित कर रहा है। लोगों की बातों से और कभी–कभार सेवा मंदिर के लिए छुटपुट तौर पर काम करने के कारण उन्हें मालूम हुआ कि सेवा मंदिर अधिक विस्तृत दृष्टिकोण के साथ समग्र विकास के लिए कार्य कर रहा है। इससे उनके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई। केशुलाल को सिर्फ शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना पर्याप्त नहीं लगता था। उन्हें यह अहसास हो गया था कि ग्रामीण समुदायों के सामने विकास से जुड़े और भी मुद्दे थे, जैसे स्वास्थ्य, शासन प्रणाली और भौतिक संसाधनों का उपयोग। उनका मानना था कि शिक्षा के साथ इन सब मुद्दों पर भी ध्यान देने की जरूरत थी।

सन 1986 में केशुलाल की मुलाकात श्री किशोर संत नामक एक सज्जन से हुई जो उनके लिए महान प्रेरणास्रोत साबित हुए। श्री किशोर, जो पूर्व में सेवा मंदिर से जुड़े हुए थे, ने तब तक उबेश्वर विकास मंडल के नाम से एक नया समूह आरंभ कर दिया था जो प्राथमिक रूप से वन संरक्षण और स्थानीय समुदायों में महिला सशक्तिकरण पर ध्यान केंद्रित कर रहा था। इस समूह के साथ काम करने का अवसर पा कर केशुलाल जल्द ही इन मुद्दों से अच्छी तरह वाकिफ हो गए। समूह की यह सोच थी कि वन इन समुदायों अस्तित्व के अभिन्न अंग हैं और इसके साथ यह भी दिखायी दे रहा था कि धीरे–धीरे वनों का विनाश हो रहा है। इससे वे लोग (यह समूह) गाँव वालों को वनों के संरक्षण और इस महत्वपूर्ण सम्पदा की निरंतर वृद्धि एवं स्वास्थ्य के लिए शिक्षित करने के लिए प्रोत्साहित हुए।

वनों के विनाश की समस्या के बारे में केशुलाल का दृष्टिकोण उनकी लीडरशिप क्षमता का एक बेहतरीन उदाहरण है। उन्होंने बताया कि किस तरह उनके समुदाय में अमीर, गरीब, ऊँची जाति वाला, निची जाति वाला हर कोई वृक्ष काट रहा था। वनों को नुकसान पहुँचाने के परिणामों से अनभिज्ञ वे सभी वनों के

विनाश में सहभागी थे। एक दिन, जब वे लोगों को वृक्ष काटना बंद करने के लिए कह रहे थे, तब एक व्यक्ति ने एक बहुत ही सरल किन्तु मर्मभेदी सवाल पूछा, "फिर मैं क्या करूँ? मैं किस तरह रोजीरोटी कमाऊँ?''

आप किसी को वह काम करने से कैसे रोक सकते हैं जो वर्तमान में उसके लिए जीवनयापन का माध्यम हो, भले ही इसके दूरगामी परिणाम लाभदायक हों? इस प्रश्न ने केशुलाल को विचलित कर दिया और अंततः उन्होंने इसका हल खोजने के लिए तहसील कार्यालय में संपर्क करने का निर्णय लिया। हालाँकि, शासन इस मुद्दे पर ध्यान देने का इच्छुक नहीं दिखायी दे रहा था और केशुलाल एवं उनके समूह को उनकी कटुता का सामना करना पड़ा। फिर भी, केशुलाल रुके नहीं और उन्होंने एक अलग रणनीति अपनाते हुए इस मुहीम में महिलाओं को शामिल करने फैसला किया। महिलाओं का सशक्तिकरण करना, जिन्हें आमतौर पर इस तरह के राजनीतिक मुद्दों से दूर रखा जाता था, एक असामान्य और अत्यंत व्यावहारिक समाधान था। जिस तरह भारत में वाहनों के मामलों में होता है, केशुलाल ने एक ऐसा समाधान खोजा जिसमें रचनात्मकता शामिल थी, और यह एक बने बनाए ढांचे से बाहर निकल कर सोचने की उनकी क्षमता को दर्शाता है।

जब महिलाएँ तहसील कार्यालय में गयी, तब जिस अधिकारी से उनका मिलना निश्चित हुआ था उसने खुद महिलाओं से मिलने के स्थान पर "आसानी से '' अपने स्टाफ के एक सदस्य को उन्हें यह समझाने के लिए भेज दिया कि साहब की आँखों में दर्द होने के कारण वे मुलाकात नहीं कर सकते। यह सुनकर महिलाओं ने पलट कर स्टाफ के उस सदस्य को बहुत ही सच्ची और प्रभावशाली बात सुनायी, "उनकी आँखों में दर्द होगा, लेकिन यहाँ हमें तो अपने पेट (भूख) का दर्द झेलना पड़ रहा है। हमें रोजगार दे दो तो हम पेड़ों की कटाई रोक देंगे।'' इस बात में तहसील कार्यालय वालों को आने वाले संकट की आहट सुनायी पड़ी और अंततः अधिकारीगण वन एवं लोक निर्माण विभागों के अंतर्गत कुछ रोजगारपरक योजनाएँ आरंभ करने को मजबूर हुए। हालाँकि, पेड़ों की कटाई पूरी तरह नहीं रुकी लेकिन इसमें बड़े पैमाने पर कमी आयी, और अब भूमि और समुदाय दोनों के लिए स्थिति सुधर रही है। कभी–कभी गैर–परंपरागत तरीके से काम करके (हालाँकि कभी वे जोखिम भरे भी साबित हो सकते हैं), जैसे – एक व्यक्ति को बस की छत पर बैठा कर या बस की खिड़की के बाहर लटके हुए यात्रा करने का कहना, यह सुनिश्चित किया जा सकता है

कि ज्यादा लोग ज्यादा कुशलतापूर्वक अपनी मंजिल तक पहुँच जाएँ। हालाँकि, महिलाओं को तहसील कार्यालय भेजना बहुत जोखिम भरा या खतरनाक कदम नहीं था, केशुलाल ने उन्हें भेज कर अपने गाँव की सबसे महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक समस्या के समाधान के लिए एक गैर–परंपरागत तरीका आजमाया।

केशुलाल जब सन 1995 में बगडुन्दा के सरपंच चुने गए, तब वे सेवा मंदिर के साथ जुड़ कर भी काम कर रहे थे। इस पद पर चुने जाने के बाद उनका सच्चा व्यक्तित्व उभर कर सामने आया। अपने कार्यकाल में वे सड़कें और जल संरक्षण के लिए नहरें बनवाने, विधवाओं को उनके हक की पेंशन दिलाने, सामुदायिक आवास एवं स्वास्थ्य केन्द्रों का निर्माण कराने में सफल रहे। उन्होंने यह सब पूरी पारदर्शिता, ईमानदारी, और इस समझ के साथ किया कि एक सरपंच के रूप उनका कर्तव्य उन लोगों की सेवा करना है जिन्होंने उन्हें चुना, ना कि उनसे कुछ चुराना या उन्हें धोखा देना। कभी–कभी, एक इंसान होने के कारण, मेरा मन रोने का होता है कि हम दुर्भाग्यवश आज इस स्थिति में आ गए हैं कि लोगों से जिस काम की उम्मीद होती है वह काम वे नहीं करते और इसलिए जब हमें ऐसा कोई व्यक्ति मिले जो वह काम कर रहा हो जो उसे करना चाहिए तब हमें उसकी तारीफ जरूर करनी चाहिए। यह एक कड़वी सच्चाई है कि ऐसे ईमानदार और निःस्वार्थ लीडर बिरले ही मिलते हैं जो उस समुदाय के हित में काम करें जिसका वे खुद कभी एक भाग हो कर उसके उसके संघर्ष में शामिल रहा करते थे।

यह सब कहने का कतई यह आशय नहीं है कि केशुलाल एक ऐसे लीडर थे जिसमें कोई खामी नहीं थी। प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक लीडर की अपनी खामियाँ होती हैं। केशुलाल याद करते हुए बताते हैं कि एक ऐसा भी वक्त था जब अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए उन्होंने बल प्रयोग किया। हम इस कार्यक्षेत्र में हिंसा को बढ़ावा नहीं देने के विषय में कितना ज्यादा सुनते हैं, फिर भी, मैं यहाँ मैं एक ऐसे अत्यधिक सम्मानित और प्रभावशाली व्यक्ति के साथ बैठा था जो मुझे बता रहे थे या कि बल प्रयोग करना गलत किन्तु प्रभावी था। मेरे मन में इस बारे में और अधिक जानने की उत्सुकता जाग उठी। पता चला कि यह नौबत इसलिए पैदा हुई क्योंकि केशुलाल ने स्थानीय पंचायत से कहा कि वह वृक्ष लगाने के लिए सामुदायिक भूमि दे दे जिस पर जायज रूप से पहला हक समुदाय का था। लेकिन, कार्यालय में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण इसकी मंजूरी नहीं हो पा रही थी। कुंठा भरे एक कमजोर क्षण में केशुलाल ने सचिव का गिरेबान पकड़ कर

उसे झंझोड़ दिया। यह बल प्रयोग काम आया। सचिव डर गया और अंततः भूमि के विकास हेतु मंजूरी देने को तैयार हुआ।

इस तरह की कहानी का क्या अर्थ लगाया जाना चाहिए? एक लीडर के रूप में केशुलाल मानते थे कि यह ऐसा व्यवहार नहीं था जिसे बढ़ावा दिया जाए या किसी भी तरह सराहा जाए। अपना आपा खोने का उन्हें बेहद अफसोस है, हालाँकि वे मानते हैं कि जो कुछ उन्होंने किया वह प्रभावी साबित हुआ। यह मुझे खुद से यह पूछने के लिए मजबूर करता है कि क्या भ्रष्टाचार को नियन्त्रण में रखने के लिए कभी– कभार समय–समय पर उसका गिरेबान पकड़ने की जरूरत है? हालाँकि, किसी को भी यह समझने में ज्यादा वक्त नहीं लगेगा कि ऐसा कदम उठाने पर अनेक खतरों का सामना करना पड़ सकता है। इसी कारण, बहुत से लोग कहते हैं कि ऐसे तरीकों का इस्तेमाल कभी नहीं करना चाहिए। केशुलाल भी यह भली–भाँति जानते हैं, और स्वीकार करते हैं कि उन्होंने जो किया वह गलत था और इस बारे में बात इसलिए करते हैं कि दूसरे लोग ऐसी बातों से कुछ सीख सकें। यह खूबी वाकई काबिले तारीफ है। ऐसे बहुत कम ही लोग होंगे जो मेरे जैसे एक अजनबी के सामने, यहाँ तक कि एक दोस्त के सामने, अपने अच्छे–बुरे दोनों गुणों के बारे में खुलकर बताएँ।

यह ईमानदारी कई मायनों में भारत की बसों की याद दिलाती है। हालाँकि, वे शायद रचनात्मक और साधन–संपन्न हैं जो बड़ी संख्या में लोगों को कुशलतापूर्वक और तेजी से लाने–ले–जाने का काम करती हैं फिर भी हम उनके संभावित खतरों को अनदेखा नहीं कर सकते। लेकिन तब भी, इन खतरों को समझने और उनके बारे में ईमानदारी के बावजूद, हम खुद को भुलावे में रखने की गलती से यह सोच कर बचने की कोशिश करते हैं कि ऐसे उपायों में कोई खराबी नहीं है। उल्टे, हम उन्हें उस रूप में मान्यता देते हैं जो वे हैं, उनके सकारात्मक पहलुओं को उभारते हैं, और उनके नकारात्मक पहलुओं को तोड़–मरोड़कर पेश करते हैं। एक अच्छा लीडर ना सिर्फ अपने समुदाय के प्रति बल्कि स्वयं के प्रति भी ईमानदार होता है और जिनकी सेवा वह कर रहा होता है उन लोगों की बेहतरी की खातिर खुद में सुधार के वह निरंतर प्रयास करता है।

पथरीले रास्ते

मुझे याद है एक बार मैं कोटडा से गुजर रहा था और मेरी नजर चट्टानों की कतार और रास्ते के बीचों बीच रखे गोल पत्थरों (बोल्डर) पर पड़ी। मेरे साथी ने मेरी ओर मुड़कर मुझे बताया, ”लूट के लिए रास्ते में ऐसी रुकावट पैदा ऐसा करना चोरों के लिए सामान्य बात है। अभी हमने रास्ते में जमाए हुए जो पत्थर देखे वह इसी तरह की एक रुकावट थी।'' मुझे याद है घबराए हुए ड्राइवर ने बड़ी तेजी से चट्टानों के बीच से गाड़ी निकाली थी। कभी–कभी आप यह पता होने के बावजूद डर कर आगे बढ़ना बंद नहीं कर सकते कि आसपास या आगे किसी मोड़ पर खतरा मौजूद है हालाँकि वह आपकी नजरों से छुपा हुआ है। सेवा मंदिर जिन प्रखण्ड़ों में काम करता है उनमें से कोटडा सबसे अधिक खतरनाक प्रखण्ड़ के रूप में जाना जाता है। हालाँकि, यदि आप अपने डर को आपका मार्गदर्शन करने देते हैं तो आप ज्यादा दूर नहीं पहुँच सकते। इस मामले में, हम पर तत्काल कोई खतरा नहीं था, लेकिन फिर भी चट्टानें यह चेतावनी दे रही थी कि रास्ते में अप्रत्याशित खतरों से वाकई सामना हो सकता है।

हाकर चंद

हम दोपहर के वक्त झाडोल प्रखण्ड़ के जेकड़ा गाँव में पहुँचे। मैं हाकर चंद से बात करने के लिए यहाँ आया था। हमने कार सड़क के किनारे छोड़ी, और मैं संकड़े पथरीले रास्ते पर दौड़ा जिसके आसपास कटीली झाड़ियों की बाढ़ लगी हुई थी। उस दोपहर झाड़ोल में झुलसा देने वाली गर्मी थी और जब मैं गर्मी को चीरते हुए हाकर चंद के घर की ओर दौड़ा तो सूरज मेरी समझदारी पर ताने मारने लगा। एक घर से दूसरे घर की ओर पैदल जाने के इस साधारण से कार्य से मुझे यह याद रखने में मदद मिली कि इन समुदायों में जीवन कठिन है, भले ही यहाँ आने पर आपको यहाँ के निवासियों को देहाती गीत गाता देख कर ऐसा नहीं लगे।

हाकर चंद के घर पहुँचने पर मेरा ध्यान उनकी छत पर गर्व से लहराते एक कम्युनिस्ट झंडे पर गया। आदिवासियों और निचली जाति के हिन्दुओं पर माओवादियों के प्रभाव से अनभिज्ञ मैं पहली बार कम्युनिस्ट झंडा देख कर अचंभे में पड़ गया। फिर भी, जल्दी ही मुझे यह पता लगा कि अक्सर यह बताया जाता है कि जातीय भेदभाव से बचने के लिए लोग इस विचारधारा की तरफ मुड़ने लगे हैं। जातीय शत्रुता से पैदा होने वाले पक्षपात से बचने की उम्मीद से निचली जाति के परिवार का बौद्ध या ईसाई धर्मान्तरण असामान्य बात नहीं है। भले ही यह स्पष्ट नहीं है कि इस तरीके से जातीय भेदभाव से बचने का यह प्रयास कितना कारगर है, अनेक धर्मनिरपेक्ष उपायों के माध्यम से कुल मिला कर स्थिति में सुधार आ रहा है। ऐसा कहा जाता है कि समाज के भीतर व्यक्ति की स्थिति सुधारने के लिए सकारात्मक कार्यवाही की कुछ नीतियों के

परिणामस्वरूप शक्ति के ढांचे में सुधार संभव होगा, लेकिन जरुरी नहीं कि इससे एक ऐसी प्रणाली विकसित होगी जो कुल मिला कर सभी के लिए न्यायपूर्ण हो। उदाहरण के लिए, जेकड़ा जैसे एक गाँव में भले ही सबसे अमीर और सबसे गरीब व्यक्ति के बीच अंतर तुलनात्मक रूप से कम है, सभी अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जाति के परिवारों को स्कूल में भर्ती के लिए आवेदन करने पर कुछ विशेष लाभ (सुविधाएँ) मिलते हैं। हालाँकि, भारत में उच्च जातियों के अनेक परिवार आज भी गरीबी के रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं, लेकिन उन्हें भी समान रूप से वह आर्थिक लाभ प्रदान नहीं किए जा रहे हैं जो निचली जाति के परिवारों को प्रदान किए जा रहे हैं। इससे भी अंततः एक ऐसा भेदभाव ही जन्म लेगा जो पूर्ववर्ती भेदभाव की तरह ही अस्वीकार्य होगा।

हाकर चंद ने बहुत उत्साह के साथ हमारा स्वागत किया। उनका घर चारों ओर घुमावदार पहाड़ियों और हरे–भरे वनों के बीच एक बहुत ही सुंदर वातावरण में स्थित था। हम घर के बाहर बने बगीचे में एक पुराने बड़े पेड़ की छाँव में बैठे। हाकर चंद से बातें करना ऐसा था मानो आप किसी धैर्यवान दार्शनिक के साथ बैठे हों। वे निश्चिन्त, आत्मविश्वास से भरे हुए थे और उनमे एक में जादुई आकर्षण मौजूद था। गहरी धँसी आँखों और दुबलेपन से उभर कर दिखाई देती जबड़े की रेखाओं के साथ उनका विशिष्ट चेहरा उनकी बड़ी सी मुस्कान और संक्रमित कर देने वाली हँसी से भाव–विह्वल हो उठता था। मैंने महसूस किया कि इस तरह के इंटरव्यू में हाकर चंद बहुत गर्व महसूस करते थे। उनकी मुलायम आवाज पर उनके आवेशपूर्ण और जटिल हावभाव हावी हो जाते थे और ऐसा लगता था जैसे वे हवा से वाक्य–रचना रूपी शिल्पकारी कर रहे हों। अपने घर में हमारा स्वागत करने के लिए मैंने उन्हें धन्यवाद दिया। उन्होंने मुझे विस्तार से बताया कि एक सरपंच के रूप में उनके उत्कृष्ट कार्य की प्रशंसा में वास्तव में किस तरह गाँव वालों ने उनके लिए यह ईंटों का यह घर बनाया। एक ईंटों का घर एक ऐसा सपना होता है जो सभी चाहते हैं लेकिन कुछ ही इसे पूरा कर पाते हैं।

एक नवयुवक के रूप में हाकर चंद ने कई सालों तक मजदूरी की। लेकिन वे महज एक मजदूर बन कर सन्तुष्ट नहीं थे और उन्होंने संकल्प लिया कि वे अपने बॉस की तरह एक मेट बनेंगे। किसी निर्माण स्थल पर काम करने वाले सभी मजदूरों पर निगाह रखने वाले को मेट कहा जाता है। पाश्चात्य समाज में इसे फोरमैन कहा जाता है। इस तरह के पद की योग्यता पाने के लिए

कुछ हद तक शिक्षा प्राप्त करना जरूरी है और हाकर चंद कभी स्कूल गए ही नहीं थे। गाँव के सबसे गरीब परिवारों में से एक में पैदा होने के कारण उनके पास विकल्प सीमित ही थे। यह स्वाभाविक है कि ऐसे में हाकर चंद आसानी से अपने सामने खड़ी इस कठिन चुनौती से डर कर मैदान छोड़ देते। लेकिन, अपने रास्ते में आने वाली रुकावटों को पार करते हुए आगे बढ़ने में उनका आत्मविश्वास मददगार साबित हुआ।

कोई यह मान सकता है कि उस वक्त हाकर चंद की सबसे बड़ी ताकत थी अपनी स्थिति सुधारने की उनकी ईच्छा और उनका खुद पर यह यकीन कि वे यह कर लेंगे। स्कूल की अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए पैसा जुटाने के लिए हाकर चंद और उनके चचेरे भाई ने ईंधन के लिए वृक्षों की अवैध कटाई शुरू की जिसे वे बेच देते थे। इससे मिलने वाले पैसे से उनकी स्कूल की जरूरतों की पूर्ति हो जाती थी, जैसे – स्लेट और लालटेन के लिए मिट्टी का तेल। स्कूल जाना शुरू करने के दस दिनों में ही वे पूरी हिंदी वर्णमाला लिखने में सक्षम हो गए ! स्कूल की पढ़ाई और चौदह साल या उससे अधिक उम्र वालों के लिए सेवा मंदिर द्वारा संचालित वयस्क साक्षरता कार्यक्रम दोनों से मिलकर धीरे–धीरे उनकी शिक्षा आगे बढ़ने में मदद मिली। आगे चल कर, वे सेवा मंदिर के वयस्क साक्षरता शिविर से जुड़े और जल्दी ही सेवा मंदिर के साथ उनका सम्बन्ध मजबूत होने लगा।

आज उनके पास पाँचवी कक्षा उत्तीर्ण करने का प्रमाण–पत्र है और वे सतत शिक्षा के अंतर्गत आठवीं कक्षा की परीक्षा देने का इरादा रखते हैं। सतत शिक्षा शासन द्वारा बारहवीं तक संचालित साक्षरता कार्यक्रम है। अपने समुदाय के सर्वाधिक दरकिनार परिवारों में से एक परिवार से होने के बावजूद उनका एक सरपंच के रूप में चुना जाना कोई साधारण उपलब्धि नहीं है। यह उनके दृढ़ संकल्प के बिना संभव नहीं था। हालाँकि, सरपंच चुने जाने के बावजूद उन्हें प्रभावी व्यक्तियों और उच्च जातियों का और अधिक सामाजिक प्रतिरोध सहना पड़ा। किन्तु, दूसरों के साथ घुलने–मिलने और आसानी से विचलित नहीं होने की उनकी खूबी के बल पर वे अपने आलोचकों और विरोधियों के साथ भी सार्थक कामकाजी संबंध बनाने में सफल रहे।

जब मैंने उनसे यह पूछा कि सेवा मंदिर उनके पेशे में किस तरह सहायक रहा तो उन्होंने इसे एक अपमानजनक प्रश्न की तरह लिया। सेवा

मंदिर के साथ अपने रिश्ते को माता–पिता के साथ एक बच्चे का रिश्ता बताते हुए उन्होंने कहा कि भुगतान की परवाह किए बिना वे सेवा मंदिर के लिए वे हमेशा काम करते रहेंगे। उनकी आवाज में कृतज्ञता, प्रशंसा और आदर का भाव साफ झलक रहा था। वे मानते हैं कि सेवा मंदिर से मिली शिक्षा या प्रशिक्षण के कारण ही उनमें आत्मविश्वास का संचार हुआ। अपनी यात्रा में मैं जितने भी लीडर्स से मिला उनमें से अनेकों ने यही भावना व्यक्त की। इन लीडर्स के माध्यम से सेवा मंदिर एक तरह से समुदायों में भी आत्मविश्वास का संचार करता है जिससे उन्हें अगम्य प्रतीत होनेवाले रास्तों पर आगे बढ़ने की ताकत और हौसला मिलता है। यदि यह आत्मविश्वास उन्हें नहीं मिला होता तो डर के कारण वे उन रास्तों पर आगे बढ़ने से रुक गए होते।

हाकर चंद जिस शिक्षा की बात करते हैं वह महज औपचारिक शिक्षा नहीं बल्कि सेवा मंदिर द्वारा बरसों संचालित प्रासंगिक प्रशिक्षण, कार्यक्रम, और अन्य आयोजन हैं। यह प्रक्रिया और इस तरह के शिविर और प्रशिक्षण कार्यक्रम सशक्त लीडर्स तैयार करने का आधार रहे हैं। और इन्हीं की बदौलत आज हाकर चंद गर्व से यह कह सकते हैं, "मेरे पास कोई डिग्री नहीं है, फिर भी मैं डिग्री वालों से ज्यादा जानता हूँ। एम. ए. जैसी डिग्रियाँ रखने वाले शिक्षित लोग तक छोटी–मोटी नौकरियाँ कर रहे हैं लेकिन सेवा मंदिर से प्राप्त अपनी शिक्षा और अपने अनुभवों के कारण मैं एक अच्छे वेतन वाला और बेहतर काम कर रहा हूँ।'' यह बताते हुए उनकी गहन गंभीरता मानो कहीं खो जाती है और उसकी वह जगह मुस्कान आ जाती है जो मुझे उत्साहित बच्चों की मुस्कान सी लगती है। यह कृतज्ञता और हैरानी का मिलाजुला एक सुंदर और सच्चा भाव था।

यह जानना रोचक है कि वृक्षों की अवैध कटाई करने का काम ही वह पहला बड़ा कदम था जिसने आज हाकर चंद को उन्हीं जमीनों का संरक्षण करने में समर्थ बनाया। हाकर चंद जब इस बारे में बात करते हैं तब मैं खुद को यह सोचने से नहीं रोक पाता कि कोटडा के वह लुटेरे, अक्सर जिनका खौफ रहता है, कैसे एक दिन उन लोगों में बदल जाते हैं जो उन्हीं रास्तों का संरक्षण करते हैं। जिनसे हम डरते हैं उनके बारे में निर्णायक होने से शायद हमें खुद को उस वक्त तक रोकना चाहिए जब तक हम उन्हें समझ कर उनका मूल्यांकन ना कर लें। आज समुदाय का कोई सदस्य यदि अवैध रूप से वृक्ष काटता है, अनाधिकृत प्रवेश करता है, या जेकड़ा की संरक्षित भूमि पर अपने पशुओं को चराता है तो उसे कठोर सामाजिक प्रतिबंधों और यहाँ तक कि समुदाय से बाहर निकाल दिए

जाने जैसी परिस्थिति का सामना करना पड़ सकता है। हालाँकि, हाकर चंद ने ऐसा करने का प्रत्यक्ष रूप से कभी नहीं कहा, मुझे ऐसा लगता है कि उनके काम का एक बड़ा हिस्सा यह सुनिश्चित करने पर केंद्रित है कि उनके समुदाय के सदस्यों को सबक सीखने के लिए उनकी तरह चोरी ना करना पड़े। हालाँकि उम्मीद है कोटडा के लुटेरे एक दिन रास्ते के संरक्षक बनेंगे, फिर भी बेहतर यही होगा कि पहले वे लुटेरे कभी ना बनें।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि वन संरक्षण समिति के साथ किया गया उनका अनुकरणीय कार्य ही यह साबित करने के लिए पर्याप्त है कि हाकर चंद किस तरह के लीडर थे। सन 2002 में वे जेकड़ा वन संरक्षण समिति के अध्यक्ष चुने गए जिसका लक्ष्य वन भूमि का संरक्षण और विकास करना है। उनके कार्यकाल में जेकड़ा और उसके पड़ोसी गाँव आमोड़ के बीच एक चारदीवारी को लेकर एक बड़ा विवाद उभर कर सामने आया। तनाव बहुत ज्यादा बढ़ गया था और प्रत्येक समुदाय को ऐसा लग रहा था कि सामने वाला समुदाय स्थिति का फायदा ले रहा है। दोनों अपनी—अपनी बात पर अड़े हुए थे और समझौते के लिए तैयार नहीं थे। इसके अलावा, पड़ोस के अन्य गाँव खेराड़ का एक राजनीतिक दल उस विवादित जमीन पर अपना दावा जताने की मंशा से अपने लोगों को उस जमीन पर अतिक्रमण करने के लिए उकसा कर आग में घी डालने का काम कर रहा था। खेराड़ में एक कम्युनिस्ट लीडर गाँव वालों को जेकड़ा की वन भूमि पर अतिक्रमण करने के लिए उकसा रहा था। विवाद बढ़ता ही जा रहा था और पड़ोसी गाँवों के बीच आपसी दुर्भावना पैदा हो रही थी। समस्या को शीघ्र हल करना आवश्यक था अन्यथा अत्यधिक उपयोग, अतिक्रमण और उपेक्षा के कारण वन बर्बाद होने का खतरा था।

स्थिति की गंभीरता को भाँपते हुए हाकर चंद ने सुधार की दिशा में तत्काल कदम उठाते हुए रीजनल फॉरेस्ट ऑफिसर, स्थानीय पटवारी और दोनों गाँवों की वन संरक्षण समितियों के सदस्यों को इकट्ठा किया ताकि इस मुद्दे पर चर्चा कर यथासंभव न्यायोचित हल जल्द से जल्द खोजा जा सके। शासन के प्रभावी अधिकारियों और दोनों स्थानीय ग्रामीण समुदायों के सदस्यों को इसमें शामिल कर उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि चर्चा में सभी पक्षों का प्रतिनिधित्व हो और उनकी बात सुनी जाए। यह एक आश्चर्यजनक रूप से सरल और सभी को स्वीकार्य तरीका था। इससे यह भी सुनिश्चित हो गया कि एक बार आपसी सहमति से निर्णय हो जाने पर इसमें शामिल समुदायों में से किसी के भी सदस्य

इसे अन्यायपूर्ण या अवैध नहीं कह सकेंगे। इसके परिणामस्वरूप और हाकर चंद ने चारदीवारी का विवाद जिस ढंग से संभाला उसके कारण आज 250 हेक्टेयर भूमि संरक्षित है और दोनों समुदायों द्वारा उसका सफलतापूर्वक मिल बाँट कर उपयोग किया जा रहा है।

हाकर चंद बताते हैं कि लोगों को यह समझाना कि उनका जायज हक क्या है। लड़ाई का केवल एक भाग है। वन संरक्षण के कार्य में धैर्य और यह समझने की जरूरत होती है कि समुदाय को इसके लाभ भले ही तुरंत ना मिलें, उनमें वक्त लगे लेकिन अंततः लाभ मिलेंगे जरूर। दीर्घकालीन परियोजनाओं में समुदाय को संलग्न करने के लिए उसका पर्याप्त समर्थन जुटाना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य है, विशेष कर ऐसी स्थिति में जब अधिकांश लोग रोज कमा कर जीवन निर्वाह करते हों और उन्हें यह भी पता ना हो कि अगले दिन के भोजन की व्यवस्था कहाँ से होगी। लीडर की जिम्मेदारी का एक पहलू यह है कि वह लोगों तक यह बात स्पष्ट रूप से पहुँचाए कि वास्तविक समस्या क्या है, गाँव में सभी पर समस्या का असर क्यों पड़ता है और किस तरह उसका हल सभी के लिए लाभदायक होगा। यह कोई आसान काम नहीं है। लाजमी है इसमें लोगों से यह कहा जाता है कि यदि वे एक सुदृढ़ और बेहतर वर्तमान का निर्माण करना चाहते हैं तो वे दूसरों के लिए और आने वाले कल के लिए काम करें। बर्बाद हो चुकी सार्वजनिक भूमि की हालत बहाल करने में वक्त लगता है। इसमें अक्सर दो से तीन साल का लम्बा वक्त लग जाता है जिस दौरान उस भूमि को अनछुआ रखा जाता है। हालाँकि, महज एक साल के लिए सार्वजनिक भूमि पर पशुओं को चराने पर पाबंदी लगाए जाने पर अनेक किसानों को ऐसा महसूस हो सकता है मानो उन्हें मृत्युदंड की सजा सुना दी गयी हो। इसलिए, हाकर चंद के काम का एक बड़ा भाग यह था कि वे अपने समुदाय में विश्वास की यह भावना पैदा करें कि उनका काम दीर्घकाल में हर एक के लिए लाभदायक होगा, भले ही शायद तुरंत उससे कोई लाभ मिलता दिखाई ना दे।

हाल ही में, हाकर चंद ने अपने गाँव से बाहर काम पर ध्यान केंद्रित करना शुरू किया है ताकि दूसरे समुदायों में भी जागरूकता उत्पन्न कर वन संरक्षण समितियों के निर्माण को बढ़ावा दिया जा सके। कोटडा प्रखण्ड़ उन समुदायों में से एक है जिसमें वे काम करते हैं। बस द्वारा झाडोल से कोटडा जाने में चार से छः घंटे का समय लग सकता है। कोटडा प्रखण्ड़ अराजकता, अनिश्चितता और पुर्वानुमान से परे होने के लिए प्रसिद्ध है। जैसा कि मेरे साथी

ने बताया, वहाँ स्थानीय 'लुटेरों' द्वारा गाड़ियों पर हमला कर लूटने के अनगिनत किस्से हैं। यात्री भले ही कितना भी सहयोग करें लुटेरे अक्सर उनके साथ मारपीट करते हैं। यह एक मात्र ऐसा प्रखण्ड़ है जहाँ सेवा मंदिर के स्टाफ से शाम चार बजे तक अपना क्षेत्र का काम रोक देना अपेक्षित है ताकि उन्हें रात के वक्त यात्रा नहीं करना पड़े। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि यह उदयपुर के उन प्रखण्ड़ों में से एक है जहाँ मूलभूत विकास की आवश्यकता सबसे अधिक है। जैसा कि बताया गया है, हालाँकि यहाँ सड़कों, विद्युत् ग्रिड और शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी शासकीय सेवाओं की कमी है, लेकिन यहाँ आसपास के सभी प्रखण्ड़ों की तुलना में बेहतर वन और कृषि योग्य भूमि मौजूद है।

कोटडा में हाकर चंद को उनके सह–कर्मियों ने कूकावास नाम के एक गाँव के बारे में चेतावनी दी। सद्भावनावश उनके साथियों ने उन्हें वहाँ जाने से रोकने की कोशिश की और चेतावनी दी कि उस इलाके में चोर हमेशा शिकार की तलाश में रहते हैं। उस वक्त तक, वन संरक्षण समिति की ओर से कोई भी गाँव में प्रवेश नहीं कर सका था और अधिकांश इसे नामुमकिन ही समझते थे। लेकिन, हाकर चंद इतनी आसानी से हार नहीं मानने वाले थे।

"मैंने उस गाँव के एक व्यक्ति को सन्देश भेजा कि वह अगले दिन आकर मुझ से मिले'', उन्होंने मुझे बताया। "जब वह आया तो मैंने उसे अपनी कार की अगली सीट पर बैठाया और हम बिना किसी समस्या के उसके गाँव पहुँचे।'' हाकर चंद ने बताया कि यदि वे अकेले जाते तो संभवतः गाँव वाले उनकी कार पर पत्थर फेंकते या उन्हें गाँव में प्रवेश करने से रोकते, लेकिन उन्हें विश्वास था कि यदि उनका कोई अपना मेरे साथ होगा तो वे ऐसा नहीं करेंगे। हाकर चंद का अनुमान था जब तक वे उस व्यक्ति के साथ हैं वे सुरक्षित रहेंगे। सचमुच, अंततः, ना सिर्फ वे कूकावास जाकर वहाँ से पूरी तरह सकुशल वापस आने में सफल रहे बल्कि वहाँ भी एक वन संरक्षण समिति बनाने में सफल रहे। हाकर चंद इस बात पर हँसते हैं कि वही लोग, जो कूकावास में चोरों और डकैतों के रूप में कुख्यात थे, अंततः आगे आए और उन्होंने आत्मविश्वास और प्रशंसा के भाव के साथ यह पहल की !

मैं यह सोचने पर मजबूर हो जाता हूँ, "क्या होगा यदि रास्ते में रुकावट का सामना होने पर हर कोई डर कर उल्टे पाँव लौट आएगा?'' क्या हाकर चंद कभी वह लीडर बन पाते जो आज वे हैं? क्या लुटेरे कभी वन संरक्षण समिति को

अपनाते ? कूकावास जैसा एक समुदाय पूर्वाग्रहों और डर के कारण तबाह होने के लिए छोड़ दिया जाता जबकि गौर करने पर साफ समझ आता है कि वास्तव में वह भी मदद के लिए पुकार रहा था। उस दिन कोटडा में मेरे साथी ने रास्ते की जिस रुकावट की ओर इशारा किया था वह उतनी ही बड़ी रुकावट प्रतीत होती है जितनी बड़ी मदद की जरूरत कूकावास जैसे समुदायों को है, जो हाकर चंद जैसे लोग करने की कोशिश कर रहे हैं। इन बाधाओं को चुनौती देते हुए उनका सामना करने वाले हाकर चंद जैसे व्यक्तियों के माध्यम से ही समुदाय फलफूल सकते हैं, बदल सकते हैं, और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि वे खुद की मदद करना सीख सकते हैं।

टूट जाना

एक दिन क्षेत्र से घर लौटते वक्त गाड़ी के टायर की हवा निकल जाने से असुविधा का सामना करना पड़ा। इस तरह की घटना कोई असामान्य बात नहीं थी। वास्तव में, जल्दी ही मैं यह मानकर चलने लगा था कि ऐसा कुछ आम तौर पर होता ही रहेगा। फिर भी, एक लम्बे थका देने वाले दिन के अंत में ऐसी किसी स्थिति से हम रूबरू नहीं होना चाहते। अधिकतर ऐसा हुआ है कि मैंने ऐसी कारों में यात्रा की जिनमें ऐसी स्थिति से निपटने के लिए अतिरिक्त पुर्जों और औजारों की कोई व्यवस्था नहीं होती थी, लेकिन ईश्वर की कृपा से इस बार हमारे पास एक अतिरिक्त टायर (स्टेपनी) की व्यवस्था थी! हम सबने मिलकर टायर बदलने में ड्राइवर की मदद की, लेकिन कार को अच्छी तरह जैक पर चढ़ाने के बाद वहाँ खड़े रह कर गुजरती हुई जीपों और बसों को देखना मन में कुंठा पैदा कर रहा था। ऐसी खराबियाँ आ जाने पर हमेशा आप एक प्रकार की लाचारी महसूस करते हैं, भले ही उसे दूर करने का उपाय सरल ही क्यों ना हो। हालाँकि, हमें जरा भी अंदाजा नहीं था कि उस रोज की यात्रा हमारे धैर्य की परीक्षा लेने पर तुली हुई थी। क्योंकि पंद्रह मिनट बाद जब हम दोबारा सड़क पर आगे बढ़े तो उस टायर की भी हवा निकल गयी जो हमने बदल कर लगाया था! उस वक्त तक घना अँधेरा हो चुका था और हम आती–जाती गाड़ियों के हेडलाइट के अलावा और कुछ नहीं देख पा रहे थे। मैं खुद को लाचार महसूस कर रहा था। ऐसा महसूस कर रहा था जैसे मैं कहीं खो गया हूँ। लेकिन, मुझे अहसास हुआ कि कोई भी खराबी इतनी बड़ी नहीं हो सकती कि उसे किसी ना किसी तरह परास्त ना किया जा सके। सौभाग्य से, हम शहर से सिर्फ एक घंटे की दूरी पर ही थे, इसलिए हमने एक मित्र को फोन लगा कर उसे कहा कि वह हमें लेने के लिए आए और सड़क के किनारे दो घंटों तक अटके रहने के बाद आखिरकार हम घर पहुँचने में कामयाब रहे।

रमेश मीणा

रमेश मीणा के घर पहुँचने के लिए हमें अरावली पर्वत माला से गुजरना पड़ा। रास्ते के आनंददायक दृश्यों को देख कर आश्चर्य से मुँह खुला रह गया। यह भारत की सबसे पुरानी पर्वत श्रृंखला है जो भारत के उत्तर–पश्चिम में स्थित है। लगभग तीन सौ किलोमीटर लम्बी यह पर्वत श्रृंखला भारत के तीन पश्चिमी राज्यों राजस्थान, गुजरात और हरियाणा के भागों से होकर गुजरती है। यह पर्वत जितने सौम्य हैं उतने ही कठोर साबित हो सकते हैं और कभी–कभी उनसे दूरी बनाए रखने का ख्याल ही बेहतर मालूम पड़ता है। फिर भी, रमेश मीणा के घर तक जाने के रास्ते में दूर से दिखाई दे रहे पहाड़ ठीक वैसे प्रतीत हो रहे थे जैसे कोई उग्र समुद्र कुछ देर के लिए शांत पड़ा हो।

रमेश मीणा के घर के आसपास का इलाका चट्टानी मिट्टी की पतली परत वाला होने के कारण काफी बंजर और वृक्ष विहीन था। स्थितियाँ खेती के लिहाज से अनुकूल नहीं थी। मैंने अक्सर बंजर भूमि के आसपास भली–भाँति सिंचित हरीभरी, संरक्षित जमीनें देखी हैं। जहाँ एक कृषि–आधारित समाज हो वहाँ यह कैसे संभव है कि कुछ जमीनें लगभग पूरी तरह उपेक्षित हैं जबकि दूसरी जमीनों का महत्त्व इतना अधिक है? मुझे आश्चर्य होता है कि क्या लालच और ताकत की इसमें कोई बड़ी भूमिका है जिसके चलते भौतिक संसाधनों के संरक्षण में भारी गिरावट हो रही है और सामाजिक अन्याय बढ़ता जा रहा है।

जमीनी स्तर के जितने लीडर्स से मैं मिला उनमें से रमेश मीणा सबसे कम उम्र के थे। उन्होंने अनेक उपलब्धियाँ हासिल की जिनमें उनके युवोचित उर्जावान स्वभाव और आकर्षक व्यक्तित्व की झलक साफ नजर आती है। द्वितीय पंक्ति के रमेश मीणा जैसे सशक्त लीडर पाना आसान नहीं है क्योंकि अधिकांश उत्साही युवा शहरों के रोमांच के आकर्षण में गाँव छोड़ कर चले जाते हैं। रमेश मीणा को वह वक्त आज भी याद है जब उनके समुदाय में किसी भी परिवारों को चिकित्सकीय उपचार की जरूरत पड़ती थी तब समुदाय का प्रत्येक परिवार एक रूपया देता था। वे याद करते हुए बताते हैं कि जब इस पैसे से ईलाज करा कर कोई ठीक हो जाता था तो कैसे उनका मन आनंद से भर जाता था। यह प्रयास छोटे दिखाई देते हैं लेकिन दूसरों की मदद करने के इन छोटे–छोटे प्रयासों में ही रमेश मीणा ने अपनी व्यक्तिगत खुशी पायी। वे उन गिने चुने व्यक्तियों में से एक हैं जिन्होंने स्कूल में बारहवीं कक्षा पास की, लेकिन इसके बावजूद बाहर जाने के बजाय उन्होंने अपने समुदाय से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े रहने, जिम्मेदारी लेने और गाँव को सशक्त बनाने के लिए संघर्ष करने का निर्णय लिया (बारहवीं कक्षा पास करने के बाद उन्होंने विवाह किया और उन पर अपने नए परिवार की जिम्मेदारी आ जाने के कारण उनके लिए आगे पढ़ाई जारी असंभव हो गया, हालाँकि यह उनका सपना था)। दूसरों की मदद करने के प्रति उनके मन में स्वाभाविक आकर्षक था। उन्होंने ना सिर्फ स्वयं के परिवार का बल्कि अपने पूरे समुदाय का जीवन स्तर सुधारने की दिशा में प्रयास किये।

रमेश मीणा अपनी पढ़ाई पूरी होने के बाद सन 2000 में सेवा मंदिर के संपर्क में आए। सेवा मंदिर से जुड़ाव के माध्यम से उनका अपने गाँव झाबला के लिए काम करने का सपना पूरा हुआ। जहाँ भी उन्होंने काम किया वहाँ अपनी उत्साहपूर्ण किन्तु विचारशील उपस्थिति के बल पर वे विश्वास और प्रेरणा का वातावरण बनाने में समर्थ रहे। आरंभ में, इन खूबियों ने अपने समुदाय के अंदर और बाहर के लोगों के साथ व्यवहार में उन्हें बहुत प्रभावशाली बना दिया। सभी उम्र के लोगों के साथ वे सहजता से बातचीत कर लेते थे, यहाँ तक कि मुझ जैसे अनजान विदेशी के साथ भी। गाँव के बुजुर्गों से उन्होंने जो सम्मान पाया था उसने एक लीडर के रूप में उनकी सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

भौतिक संसाधनों के संरक्षण के क्षेत्र में रमेश मीणा ने अत्यधिक कार्य किया। निःसंदेह, सेवा मंदिर ने उन्हें झाबला में संयुक्त वन प्रबंधन साइट पर उनके असाधारण कार्य के लिए उम्मेद मल लोढ़ा अवार्ड से सम्मानित किया। संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम एक शासकीय योजना है जिसमें वन विभाग और स्थानीय ग्राम

वन संरक्षण एव प्रबंधन समिति मिल कर एक नष्ट हो चुके वन के विकास के लिए कार्य करते हैं। इस साझेदारी प्राप्त होने वाले लाभ वन विभाग और गाँव के बीच बाँट दिये जाते हैं।

झाबला की वन भूमि पर बहुत से अतिक्रमण थे। ग्राम समूह के साथ मिलकर रमेश मीणा ने अतिक्रमण करने वालों को अपने अतिक्रमण हटाने के लिए राजी किया। यह प्रक्रिया कई सालों तक चली और अंततः वन भूमि से सभी अतिक्रमण हटाए गए। चूँकि रमेश मीणा गाँव के गिने चुने शिक्षित लोगों में से एक थे इसलिए साइट पर मिट्टी और जल संरक्षण के कार्य के लिए उन्हें मेट (सहायक) के रूप में नियुक्त किया गया। जब वे इस कार्य में लगे तब सुरक्षा के उद्देश्य से संयुक्त वन प्रबंधन साइट के चारों ओर एक दीवार बनाने का प्रयास जारी था। हालाँकि, अतिक्रमण और आसपास के गाँवों से अनाधिकृत प्रवेश करने वाले दीवार को नुकसान पहुँचाने या नष्ट करने की लगातार कोशिश कर रहे थे। लोगों को यह समझाना अत्यधिक कठिन था कि वे संयुक्त वन प्रबंधन साइट के प्रति सम्मान का भाव रखते हुए उसका महत्त्व समझें। जैसा कि परिवर्तन लाने के कई मामलों में देखा गया है और जिसका जिक्र इस किताब में जगह–जगह किया गया है, लोगों को यह समझाना हमेशा मुश्किल होता है कि दीर्घकालीन लाभ भी लघु अवधि के लाभ जितने ही महत्वपूर्ण होते हैं, भले ही वे तुरंत दिखाई ना दें।

मैंने रमेश मीणा से पूछा कि परिवर्तन लाने की प्रक्रिया में उन्हें सबसे ज्यादा चुनौतीपूर्ण भाग कौन सा लगा। उनका जवाब अपने आप में उनकी उस खूबी को दर्शा देता है जो उन्हें इतना प्रभावी लीडर बनाती है, "जब लोग एकसाथ बैठते हैं'' उन्होंने कहा "और यह तय करते हैं कि परिवर्तन लाने जा रहे हैं, हर एक व्यक्ति की सोच एक जैसी नहीं होती। कुछ राजी होते हैं, कुछ नहीं होते। एक व्यक्ति ऐसी स्थिति में होना चाहिए जो उसे परिवर्तन स्वीकारने से नहीं रोकती हो। लोगों को यह समझाने में वक्त लगता है कि वे परिवर्तन के महत्त्व को समझें।'' परिवर्तन लाने के प्रयास में संलग्न रमेश मीणा को यह अहसास हुआ कि उनका काम उन अलग–अलग कारणों को समझना और उनका सम्मान करना है जिनके चलते लोग परिवर्तन को असुविधाजनक या असंभव तक मानते हैं और साथ ही उन्हें यह समझाना भी है कि विभिन्न परिवर्तनों से कौन–कौन से लाभ संभव है। इस तरह वे लोगों की मदद करने में समर्थ हुए कि वे अपने–अपने रक्षा–कवच त्याग दें और अपनी सोच का दायरा बढ़ा कर परिवर्तन अपनाने के लिए तैयार हों। रमेश मीणा यह भी स्वीकारते हैं कि दूसरों से बदलाव की अपेक्षा करने से

पहले उन्हें खुद में बदलाव लाना पड़ा। रमेश मीणा का मानना है कि परिवर्तन वास्तव में आपसी आदान–प्रदान की एक प्रक्रिया है। वे निरंतर खुद में सुधार लाने की कोशिश में लगे हुए हैं ताकि दूसरों की मदद और अधिक प्रभावी ढंग से कर सकें। शुक्र है आत्म–सुधार का उनका विचार लोकप्रियता पाने की मंशा से नहीं बल्कि नैतिकता की भावना से उपजा है।

रमेश मीणा निरंतर नयी पहल और परियोजनाओं में लगे रहे हैं, जैसे – नयी उत्पादक कृषि तकनीकों से लोगों को परिचित कराने में सहायता करना, शिक्षा को बढ़ावा देना और समुचित स्वास्थ्य देखभाल सुविधा का विकास करना। एक लीडर के रूप में रमेश मीणा की खूबियाँ, जैसे– दृढ़ संकल्प और भविष्य के प्रति दृष्टिकोण उनके लिए मददगार रहे। हालाँकि, इसमें उनकी यह सोच भी उनकी मददगार रही कि सामुदायिक कार्य और सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया में सम्मान और गरिमा की आधारभूत भूमिका होती है। रमेश मीणा ने बताया, "अन्य व्यक्ति की गरिमा भी आपकी अपनी गरिमा जितनी ही महत्वपूर्ण होती है। अगर आप दूसरों का सम्मान करते हैं तो वे आपका सम्मान करेंगे।'' इस दृष्टिकोण की बदौलत, भले ही बदले में उन्हें हमेशा वैसा ही व्यवहार ना मिला हो, रमेश मीणा एक ईमानदार, पारदर्शी और सम्मानित लीडर के रूप में आगे बढ़ते चले गए।

मैं जब वहाँ गया तब रमेश मीणा झाबला में किसी भूमि के विकास से जुड़ी एक ऐसी परिस्थिति से जूझ रहे थे जो संभवतया खतरनाक हो सकती थी। यह मुद्दा तब उठा जब 2004 में रमेश मीणा ने सरपंच पद का चुनाव लड़ा। इसमें वे हार गए। फिर भी यह स्पष्ट हो गया कि उनके पास मजबूत जनाधार था जिसकी बदौलत उनके मन में अगली बार फिर चुनाव लड़ कर जीतने की उम्मीद जागी। सन 2010 में जैसे–जैसे चुनाव निकट आने लगा सरपंच ने रमेश मीणा को हर तरह से नीचा दिखाना शुरू कर दिया। हालाँकि, समुदाय के लिए इससे भी बुरी बात यह थी कि सरपंच वोट बटोरने की मंशा से लोगों से झूठे वादे कर रहा था। सरपंच ने वहाँ के लोगों को झाबला के संयुक्त वन प्रबंधन क्षेत्र में अतिक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया और यह वादा किया कि पुनः चुनाव जीतने पर वह अतिक्रमण की गयी भूमि पर उन्हें मालिकाना हक दिला देगा। उसने एक नए कानून का हवाला देते हुए कहा कि उस कानून के तहत अब ऐसा किया जाना संभव है। इसलिए, सरपंच की बात पर यकीन करते हुए लोग और अधिक अतिक्रमण करते चले गए।

इस तरह के भ्रष्टाचार ने रमेश मीणा की लीडरशिप में चल रहे झाबला संयुक्त वन प्रबंधन के प्रयासों पर पूरी तरह पानी फेर दिया। झाबला के सरपंच ने गाँव वालों की नासमझी और अज्ञानता का फायदा उठाते हुए उनके मतदान के निर्णय को प्रभावित करने का प्रयास किया। निराशा अच्छे भले लोगों को भी बुराई के रास्ते पर ले जा सकती है और कुछ लोग कठिन एवं एक समान निर्णय लेने के लिए बाध्य किए गए। त्रासदी यह थी कि जिन्होंने, सरपंच की सहमति से, 2005 के बाद संयुक्त वन प्रबंधन साइट पर अतिक्रमण किया उन्हें कभी भी उनसे किए गए वादे के मुताबिक जमीन नहीं मिल पाएगी लेकिन सरपंच को उनके वोट जरूर मिल जाएँगे।

अंत में, दुर्भाग्यवश, निःसंदेह सरपंच ही दोबारा चुना गया। इससे विचलित हुए बिना (वैसा बिल्कुल नहीं जैसा दूसरी बार हमारी गाड़ी का टायर बैठ जाने पर सड़क किनारे मैं हुआ था) रमेश मीणा ने अपने साथी गाँव वालों को उनके सामूहिक अधिकारों के बारे में बताने का और यह बताने का काम जारी रखा कि सरपंच उनसे क्या वादा कर सकता है और क्या नहीं। यह उन्होंने इस उम्मीद से किया कि वे लोग पुनः ऐसे शर्मनाक राजनीतिक छल–कपट के शिकार नहीं होंगे। रमेश मीणा ने बताया कि उन्हें इस बात की तसल्ली है कि उन्होंने सच बात लोगों से कही और दुआ की कि यह सच दूसरों की चालाकी से उन लोगों की रक्षा करे। साथ ही, यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि उन्हें उम्मीद थी कि जिन संयुक्त वन प्रबंधन साइट्स के संरक्षण के लिए उन्होंने इतना कठोर परिश्रम किया था वे सुरक्षित रहेंगी। अपने दुर्भाग्य या विपरीत परिस्तिथियों के बावजूद वे अपना सब कुछ दाँव पर लगा कर पूरी ताकत से उस रास्ते पर चलते गए जो उन्होंने अपने लिए चुना था। मैंने रमेश मीणा की जो खूबियाँ बताई, जो उन्हें दूसरों से अलग बनाती हैं, वे कोई मायने नहीं रखती अगर लगातार कठिनाइयों से जूझने के बावजूद उनमें आगे बढ़ने का दृढ़ संकल्प और मजबूती नहीं होती। ठीक वैसे ही जैसे क्षेत्र में किया गया हमारा काम कोई मायने नहीं रखता अगर दूसरी बार टायर बैठ जाने पर हम हार मान लेते, रमेश मीणा के प्रयास भी बेकार साबित होते अगर वे उन परिस्थितियों से घबरा कर मैदान छोड़ देते जो उनके नियन्त्रण से बाहर मालूम पड़ती थी। लीडरशिप कायरों के बस की बात नहीं है, लीडर को मजबूती डटे रहना पड़ता है।

CRUX

आत्मविश्वासी ड्राइवर

भारत की सड़कों पर गाड़ी चलाते हुए सुरक्षित आगे बढ़ने के लिए जो मूलभूत खूबियाँ जरूरी हैं उनमे से एक है आत्मविश्वास। भारत में मोटरसाइकिल चलाना सीखने पर मुझे यह बात लगभग तुरंत ही समझ आ गयी। वह पहला मौका था जब मैं भारत में गाड़ी चला रहा था और वह शायद सड़क से गुजरने वाले दूसरे लोगों के लिए भी उतना ही डरावना रहा होगा जितना मेरे लिए था । मुझे तुरंत ही उन संभावित खतरों का अहसास हो गया जो एक हिचकिचाने वाला ड्राइवर पैदा कर सकता है। यह समझना महत्वपूर्ण था कि आत्मविश्वासी बने रहकर बिना भटके अपनी दिशा निरंतर बरकरार रखना आपके लिए कितना जरूरी था। सड़क पर एक वक्त में इतने सारे ड्राइवर एकसाथ गाड़ियाँ चलाते हैं इसलिए यह सभी के अंर्तजुनुन से ही संभव है, और इसीलिए मैंने शीघ्र ही समझ लिया कि अपनी ड्राइविंग पर ध्यान केंद्रित करते वक्त मैं इस पर बात ध्यान नहीं दे सकता कि दूसरे ड्राइवर क्या कर रहे हैं। मुझे याद है एक बार जब मैं एक घुमावदार चौराहे पर पहुँचने ही वाला था तब मैंने अपनी दिशा में बढ़ने के स्थान पर उस चीज से बचने का प्रयास किया जो मेरी कल्पना में सामने वाला ड्राइवर करने वाला था। ऐसा करके मैंने ना सिर्फ उसे और खुद को बल्कि दस दूसरे लोगों को भी करीब–करीब मार ही दिया था ! यह भले ही पिछड़ापन लगे, मुझे खुद को यह सिखाना ही पड़ा कि अपनी ड्राइविंग में आत्मविश्वास बनाए रखने और अपनी मंजिल के प्रति सच्चा बने रहने से बाकी सब खुद–ब–खुद ठीक हो जाएगा। यह कोई आसान काम नहीं था। वास्तव में, यदि आप वाकई अपने आत्मविश्वास की परीक्षा लेना चाहते हैं तो मैं आपके सामने भारत में एक बार मोटरसाइकिल पर एक चक्कर लगाने का प्रस्ताव रखता हूँ।

जेलकी बाई

मैं जेलकी बाई से पहली बार उनके गाँव से कुछ किलोमीटर दूर कोटडा प्रखण्ड़ के एक छोटे कस्बे में मिला। जब मैं वहाँ पहुँचा तब मेरे आने की जानकारी से बेखबर वे किसी के अंतिम संस्कार में शामिल होने गयी हुई थी। मुझसे मिलने के लिए उन्हें अंतिम संस्कार का कार्यक्रम बीच में छोड़ कर आना पड़ा यह जान कर मैं असहज महसूस करने लगा। हालाँकि, जेलकी बाई ने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि इंटरव्यू में बहुत ज्यादा वक्त नहीं लगेगा तो उन्हें कोई समस्या नहीं है। मैं और मेरा साथी उनकी उपलब्धता के लिए आभारी थे और हमारी पूरी कोशिश रही कि उनके वक्त का हम कुशलता से उपयोग करें। इससे तत्काल यह स्पष्ट हो गया था कि इंटरव्यू हम नहीं बल्कि वे संचालित करेंगी। इससे पहले कि मैं अपने अनुवादक से एक प्रश्न पूछने का कह भी पाता, वे बोलना शुरू कर चुकी थी । यह जेलकी बाई की ही जुबानी है। मुझे जल्दी ही यह समझ आ गया कि जेलकी बाई ने बाकी सभी चीजों से ज्यादा जो दर्शाया वह था आत्मविश्वास। मैं आश्चर्य में पड़ गया कि यह उनमें आत्मविश्वास पनपा कहाँ से !

उनका जन्म दक्षिणी राजस्थान की सीमा से लगे पड़ोसी राज्य गुजरात में हुआ था। बहुत छोटी उम्र से ही वे पशु पालने और घरेलू कामों में अपने माता–पिता की मदद करने लगी थी। अठारह वर्ष की उम्र में कोटडा में एक छोटे गाँव में रहने वाले व्यक्ति से उनका विवाह हुआ। कोटडा आ जाने के बाद उन्होंने

खेतों में काम करना शुरू कर दिया। उन्हीं दिनों आस्था संस्थान (सामुदायिक विकास के क्षेत्र में काम करने वाला उदयपुर का एक एनजीओ) और सेवा मंदिर जैसी संस्थाओं ने गाँव में स्वास्थ्य, भौतिक संसाधनों के प्रबंधन, शिक्षा और शासन–प्रणाली के बारे में जागरूकता के उद्देश्य से बैठकें आयोजित करना शुरू की।

कोटडा के जंगल से जिस तरह लोग पेड़ों को काट कर ले जा रहे थे वह किसी से छुपा नहीं था। जब कोटडा वालों को यह समझ आया कि अगर उनके जंगल पूरी तरह नष्ट हो जाएँगे तो उन्हें गंभीर विपत्ति का सामना करना पड़ेगा, तब वे सक्रिय हुए और उन्होंने शासकीय वन विभाग से मदद माँगी। कोटडा में कार्यरत सेवा मंदिर ने गाँव वालों में वन संबंधी जागरूकता और ज्ञान अर्जन की भावना विकसित करने में मदद की जिसकी बदौलत वे अनाधिकृत प्रवेश करने वालों और वृक्षों की अवैध कटाई करने वालों के खिलाफ संघर्ष छेड़ने में समर्थ हुए। जेलकी बाई ने याद करते हुए बताया कि कैसे एक ऐसा भी वक्त था जब उनके समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति अशिक्षित था और कोई भी भूमि कानूनों या अपने व्यक्तिगत और सामूहिक अधिकारों के बारे में कुछ नहीं जानता था। उन्हें गाँव में मौजूद भूमि की अलग–अलग श्रेणियों या उनसे संबंधित नियमों की जरा भी जानकारी नहीं थी। कई मामलों में तो भूमि संबंधी अभिलेख (रेकॉर्ड) भी खो गया था और अतिक्रमण करने वाले उन जमीनों को हड़प रहे थे जो वास्तव में सार्वजनिक या सभी के उपयोग के लिए थी। इसके फलस्वरूप, गाँवों के हाथों से वह जमीनें छिनती जा रही थी जिन पर उनका जायज और सामूहिक हक था। उन्होंने बताया कि वे लोग मुख्यधारा से इतने अलग–थलग थे कि उन्हें यह तक नहीं पता था कि सबसे निचले स्तर पर भारत में राजनीतिक तंत्र किस तरह काम करता था।

ऐसी स्थिति क्यों और कैसे थी इस बहस से परे यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह की अनभिज्ञता गाँव वालों को शोषण का एक आसान शिकार बना देती है। यह एक दुःखद बात है कि कोटडा के मामले में उस वक्त वन विभाग भी मौके का फायदा उठा रहा था। शायद यह समाज की विडंबना ही है कि वह रक्षक ही भक्षक बनकर उन चीजों का विनाश करने में लग जाए जिनके संरक्षण की जिम्मेदारी उसे सौंपी गई हो। उदाहरण के लिए हथियार, कारें और टेक्नॉलॉजी सब कुछ हमारी मदद के लिए विकसित किए गए हैं, लेकिन वे दुनिया में जीवित चीजों (जीवन) को नुकसान भी पहुँचा सकते हैं। इस मामले में

वन विभाग की भूमिका इससे कोई अलग नहीं थी। इसकी स्थापना वनों के संरक्षण और संवर्धन के उद्देश्य से की गई थी लेकिन उसके ही कुछ लापरवाह अधिकारियों ने ही इस संसाधन के विनाश में बड़ी भूमिका निभाई।

दुर्भाग्यवश, महज अपनी भूमि की सीमाओं के बारे में ही जानना हमेशा पर्याप्त नहीं होता और अक्सर सिर्फ इस जानकारी के बल पर अनाधिकृत प्रवेश रोकना संभव नहीं होता। कोटडा को एक बड़ा खतरा गुजरात से बाहर स्थापित एक कंपनी से था जो गाँव में आकर कुछ गाँव वालों को रिश्वत देकर यथासंभव वृक्षों की कटाई करके ले जाती थी। यह स्पष्ट हो गया कि वन विभाग के कुछ अधिकारी गुजरात की इस कंपनी से मिले हुए थे, क्योंकि या तो वे गाँव वालों के दावों को खारिज कर देते थे या इस मुद्दे पर कार्यवाही करना टाल देते थे। इसलिए गाँव वालों ने मामले को खुद अपने हाथों में लेने का निश्चय किया। एक दिन, उन्होंने गाँव के मुख्य संपर्क मार्ग पर रास्ता रोक दिया जिसके कारण वाहन गाँव से अवैध कटाई कर पेड़ नहीं ले जा सके। रास्ता रोक कर वे ऐसे दो–तीन वाहनों को रोकने में सफल रहे। वन विभाग के स्थानीय अधिकारियों को बुलाकर उन्होंने इसकी बाकायदा शिकायत दर्ज कराई। लेकिन इसके बावजूद वन विभाग ने इसकी पूरी तरह अनदेखी करते हुए किसी भी तरह की कार्यवाही करने से इंकार कर दिया क्योंकि स्पष्ट है लकड़ी काट कर ले जाने वालों से उन्हें आर्थिक लाभ मिलता था।

ऐसी स्थिति देख कर, गाँव वालों ने अपनी एक प्रणाली ईजाद की जिसमें यदि कोई अवैध तरीके से लकड़ी काट कर ले जाता हुआ पकड़ा जाता तो उसे जुर्माना चुकाना होता था। जो गाँव के ही अपराधी होते थे और जुर्माना चुकाने से इंकार करते थे उन्हें अपराध के बदले सामाजिक प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ता था, जबकि गुजरात की कंपनी जैसे बाहर के अपराधियों को बार–बार रास्ता रोककर अवैध रूप से वृक्ष काट कर सामग्री बाहर ले जाने से रोका जाता था और जुर्माना चुकाने के बाद ही उन्हें जाने दिया जाता था। इस व्यवस्था को लागू कर उसे बनाए रखने में जेलकी बाई ने अग्रणी भूमिका निभाते हुए यह सुनिश्चित किया कि नुकसान की सही–सही भरपाई वसूल हो। इस तरह, भ्रष्टाचार के निर्मम दुष्चक्र और धमकाने वाली ताकतों के कारण हिचकिचाहट के बावजूद, वे हिम्मत से आगे बढ़ी और ना सिर्फ खुद की और अपने गाँव की भलाई की चिंता की बल्कि भौतिक संसाधनों के विकास का मार्ग भी प्रशस्त किया।

यह मामला एक ऐसी मिसाल पेश करता है जिसने एक समुदाय की कार्य प्रणाली ने वन विभाग जैसे एक सरकारी निकाय के अधिकारियों पर असर डालकर उन्हें जवाबदेही के कटघरे में ला खड़ा किया जिससे वे अपने कामकाज के तरीके बदलने को बाध्य हो गए। दरअसल, जब मैं गाड़ी चलाकर कोटडा तक गया, वहाँ के घने जंगलों को देखकर मैं हक्का–बक्का रह गया। सच कहूँ तो, मुझे झटका लगा। मुझे लगा मैं अपने साथी की ओर मुड़कर कहूँ, "इसे कहते हैं असली जंगल !'' इस मुद्दे पर संघर्ष करने के प्रयास में गाँव वालों ने जो हिम्मत और मजबूती जुटाई उससे यह समझा जा सकता है कि एक एकजुट समुदाय में कितनी ताकत हो सकती है। मुझे यकीन है कि अगर जेलकी बाई में जन्मजात आत्मविश्वास और अपने गाँव के भौतिक संसाधनों के संरक्षण का दृढ़ संकल्प नहीं होता तो ऐसा कभी संभव नहीं होता।

इस बीच, सेवा मंदिर का ध्यान जेलकी बाई की ओर गया। सेवा मंदिर ने जेलकी बाई से पूछा कि क्या वे एक महिला संसाधन केंद्र स्थापित कर उसका संचालन करना पसंद करेंगी। उन्होंने सहर्ष यह जिम्मेदारी स्वीकार की और उत्कृष्ट कार्य किया। अब वे अस्पतालों के साथ काम करती हैं और स्वास्थ्य शिक्षा के बारे के प्रचार–प्रसार में मदद करती हैं। अपने गाँव से कुछ किलोमीटर की दूरी पर उन्होंने एक दाल मिल स्थापित करने में मदद की और मिट्टी का क्षरण रोककर उसकी सुरक्षा के लिए वाटरशेड प्रोग्राम स्थापित करने में भी सक्रिय भूमिका निभाई। उनका मानना है कि विधवाओं के लिए पेंशन, गर्भवती महिलाओं और दिव्यांगों के कामों में उन्हें सबसे ज्यादा विरोध का सामना करना पड़ा। इन कामों के लिए जब वे पंचायत जाती थी तब वहाँ वे लोग उनकी हँसी उड़ाते और उन्हें अपमानित करते थे। इस पर वे कहती थी, "आप भेदभाव क्यों कर रहे हैं? आप सबको औरतों ने ही जन्म दिया है, और इसीलिए इस वक्त आप राज कर रहे हैं। सभी व्यक्ति समान हैं और उनमे कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।'' इस पर वे चुप हो जाते और अंततः उनके प्रस्ताव को स्वीकृत कर देते। झिझक का अभाव और साफ नीयत उनकी सफलता की कुंजी थी। यदि उनमें जरा भी झिझक होती तो उनके प्रस्ताव कभी मंजूर नहीं होते। यह अपनी मोटरसाइकिल पर मेरे शुरुआती चक्कर की उस हिचक जैसा नहीं था जब मैं पेट में गड्ढा महसूस करता था। यह सोच कर मुझे ताज्जुब होता है कि दूसरे लोग मुझे मौका दें इस इंतजार में मैंने कितना ज्यादा वक्त गँवा दिया, जबकि मुझे इतना भर करना था कि थोड़ा आत्मविश्वास रखते हुए खुद अपनी ही ओर से एक पहल करता?

उन्होंने बताया कि आज गाँव वाले अपने अधिकारों के प्रति अधिक से अधिक जागरूक हो रहे हैं लेकिन इसके बावजूद उन्हें चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती पानी की कमी की है जिसे दूर करने के लिए वे नदी पर एक बाँध बनाने का विचार कर रहे हैं। बिजली, स्नानघरों एवं शौचालयों और पशुओं को रखने की व्यवस्था की कमी अन्य समस्याएँ हैं। इन मुद्दों पर ध्यान देने की जरूरत है, दरअसल यह स्वीकारोक्ति इन समस्याओं के हल के लिए जेलकी बाई के संकल्प को और अधिक दृढ़ बनाती है। उनके अनुसार, "यह समुदाय के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यदि कोई जागरूकता नहीं होगी तो कोई लाभ भी नहीं होगा, और यदि कोई लाभ नहीं होगा तो कोई विकास भी नहीं होगा।''

मैं उनकी बात के आखरी भाग को मन ही मन दोहराने से खुद को नहीं रोक पाता – "यदि कोई लाभ नहीं होगा तो कोई विकास भी नहीं होगा।'' विकास को समझने का यह एक निराला ही तरीका है लेकिन साथ ही बहुत ही आधारभूत स्तर पर यह उसका एक सूक्ष्म अवलोकन भी है। सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक न्याय के संदर्भ में विकास के परंपरागत आदर्शों में लाभों को देखना और मापना सफलता की कुंजी है। यह कुछ हद तक उचित भी प्रतीत होता है, लेकिन साथ ही एक अधिक गहन प्रश्न यह भी उत्पन्न होता है कि लोगों के मत में लाभदायक क्या है और विकास की प्रक्रिया की प्रगति को हम किस तरह मापते हैं। मैं अपनी इस यात्रा में जितने भी व्यक्तियों से मिला उनमे से लगभग सभी ने कहा कि निःस्वार्थ होकर और दूसरों के लिए काम करना उनके समुदाय की बेहतरी का सबसे अच्छा तरीका है, और साथ ही खुद की बेहतरी का भी यह सबसे अच्छा तरीका है। एक तरह से यह इस बात की तरफ इशारा करता है कि लाभदायक महज वह है जो पूरा समुदाय चाहता है। हालाँकि, इस बात से भी एक सवाल खड़ा होता है, क्योंकि तब क्या होगा जब समुदाय यह मानता हो कि किसी चीज से उसे लाभ हो रहा है, जबकि वास्तव में उससे समुदाय को हानि पहुँच रही हो और हम इसे कैसे जानेंगे? इन प्रश्नों का जवाब खोजना मुश्किल है। हम यही कर सकते हैं कि हम समुदायों को करीब लाने और ऐसा दीर्घकालीन एवं टिकाऊ भविष्य बनाने की दिशा में काम करने में उनकी मदद करें जैसा वे चाहते हों।

रास्ते में ना चाहते हुए भी मैं इन सवालों के बारे में सोचता रहता था। रास्ते विकास की सबसे ठोस सच्चाइयों में से एक हैं। भारतीय भू–दृश्य से

गुजरती इसकी पगडंडियाँ गाँवों और शहरों में रहने वालों दोनों के लिए सबसे दूरस्थ इलाकों तक पहुँचना संभव बनाती हैं। देश को एक अत्यंत विशाल समुदाय के रूप में देखा जा सकता है, और रास्ता ही विकास संभव बनाता है। यह हमारा चुनाव है कि हम रास्ते का उपयोग किस तरह करने का निर्णय लेते हैं, हम उस रास्ते को कैसे भविष्य की दिशा देते हैं। कम महत्व के मामले से निपटने में सारी कोशिश लगा देने पर इन अधिक महत्वपूर्ण सवालों को चूक जाना बहुत आसान है। वास्तव में, हम अपनी पूरी ऊर्जा यदि आज की चिंता में ही लगा दें तो हम लंबे समय के बारे में नहीं सोच सकते।

जितने भी लीडर्स के इंटरव्यू मैंने लिए उनके काम को समझने का एक तरीका शायद यह है कि वे अपने गाँव वालों और सम्पूर्ण समुदाय को रोजमर्रा के जीवन की चिंताओं और अत्याचार से मुक्त कर उनमें भविष्य में झाँकने और अपेक्षाकृत लम्बी अवधि के आधार पर सोचने की क्षमता विकसित कर रहे हैं। इस स्वतंत्रता के बिना उनका वर्तमान परिस्थितियों के दुष्चक्र से निकल पाना असंभव है। जब तक वे यह स्वतंत्रता हासिल नहीं करते, वे वास्तव में यह निर्णय नहीं ले सकते कि वे किस तरह का जीवन जीना चाहते है।

जेलकी बाई के इंटरव्यू पर मनन–चिंतन करने पर मैं उनके आत्मविश्वास का कायल हो गया। उनके जैसा आत्मविश्वास किसी स्त्री या पुरुष में कम ही देखने को मिलता है। उन्होंने जिस ढंग से बात की उससे जाहिर होता है कि वे एक मजबूत, उत्साही और आत्मविश्वास से भरपूर व्यक्ति हैं (हालाँकि वास्तव में मैं यह नहीं समझ सका कि वे क्या कह रही थी, फिर भी मैं दावे से यह कह सकता हूँ !)। इन समुदाय की महिलाओं को वास्तव में जेलकी बाई जैसे प्रेरणास्रोतों की जरूरत है। आत्मविश्वास से व्यक्ति को चुनौती स्वीकार करने, सवाल करने और विपत्ति का डट कर सामना करने की ताकत मिलती है। हिचकिचाहट और संकल्प की कमी आपकी यात्रा में सिर्फ रुकावटें ही पैदा करते हैं। जेलकी बाई ने विकास कार्यों के माध्यम से अपना आत्मविश्वास पाया। हाथ में ली गयी प्रत्येक परियोजना से उन्हें अगली परियोजना के लिए ताकत मिलती चली गयी, ठीक वैसे ही जैसे प्रत्येक चौराहे से गुजरने पर मुझे में अगले चौराहे से सही सलामत गुजरने का विश्वास बढ़ता चला गया और इस तरह के अनुभवों से गुजरने पर ही व्यक्ति में अधिक व्यापक दृष्टिकोण विकसित होने की उम्मीद की जा सकती है।

रास्ते का महत्व

जीप और कार से क्षेत्र की ओर जाते समय अक्सर सेवा मंदिर के स्टाफ से मुझे वे कहानियाँ सुनने को मिलती जिनमें नव–निर्मित रास्तों (सड़कों) के लिए उनका आभार झलकता था। मैं समझ सकता हूँ इन इलाकों में यात्रा करना कितना मुश्किल है। जल्दी ही मैंने यह पूछना छोड़ दिया कि अमुक स्थान कितना दूर है और उसकी जगह मैं यह पूछने लगा कि वहाँ पहुँचने में कितना वक्त लगेगा। आपका आधा दिन उस रास्ते को पार करने में जा सकता है जो एक अच्छी सड़क से सिर्फ दो घंटे में पार किया जा सकता है। ग्रामीण इलाकों में जीवन कैसा होना चाहिए इस विषय में उनके अत्यधिक प्रेम पूर्ण विचारों के साथ रास्ते के प्रति उनकी आभार की इस भावना या अभिव्यक्ति को मैं कभी चुनौती नहीं दूँगा और ना ही उसे महत्वहीन मानूँगा। मैंने दुनिया के दो सबसे बड़े महानगरों, लन्दन और न्यूयॉर्क, में अपने जीवन का अधिकांश भाग जिया है इसलिए स्वाभाविक रूप से मैं कुशलता को एक काबिले तारीफ खूबी मानता हूँ, चाहे वह व्यक्ति की कुशलता हो या मशीन की। हालाँकि, आप इन रास्तों को जितना सकारात्मक परिवर्तन का माध्यम मानने लगते हैं उतने ही वे नकारात्मक परिवर्तन के माध्यम भी लगने लगते हैं। इस तरह के किसी रास्ते का लाभ कैसे उठाया जाए और इसे कैसे अपने समुदाय के हित में काम में लाया जाए यह समझना कोई आसान काम नहीं है।

लिम्बा राम

हम रास्ते का उपयोग किस तरह करते हैं यह कितना महत्वपूर्ण है, यह बात मुझे कृष्णपुरा गाँव के लिम्बा राम से मिल कर सबसे ज्यादा समझ आयी। लीडरशिप के अदृश्य रास्ते के साथ वास्तविक भौतिक रास्ते का उपयोग उन्होंने जिस तरह किया उसके कारण मुझे लगता है उनके जिक्र के साथ इस किताब को पूरा करना सर्वोत्तम होगा। अनेक मायनों में लिम्बा राम एक असाधारण लीडर हैं और रास्ते का उपयोग अपने हितों की पूर्ति के लिए करने की उनकी क्षमता की उनकी सफलता में बहुत बड़ी भूमिका रही है। अलग–अलग प्रकार के लोगों और उपक्रमों के साथ काम करने में सक्षम होने का महत्त्व उन्होंने समझा। महत्वपूर्ण सरकारी अधिकारियों, समाज की बड़ी शख्सियतों, एनजीओ वगैरह से वे उतनी ही सहजता और आत्मविश्वास के साथ बात करते हैं जितनी सहजता और आत्मविश्वास के साथ वे अपने समुदाय के लोगों के साथ बात करते हैं। अपने गाँव में ग्राम समूह के निर्माण में उन्होंने अभिन्न भूमिका निभाई और उसमें कार्यकारी कोषाध्यक्ष का पद संभाला। उनकी जवाबदेही और पारदर्शिता ने उन्हें एक ईमानदार एवं सच्चा लीडर बनाया और साथियों में उन्हें लोकप्रियता प्रदान की। लिम्बा राम स्वीकार करते हैं कि एकता स्थापित करना उनके कार्य के सबसे महत्वपूर्ण भागों में एक था। उन्होंने बताया, "एकता सिर्फ विकास के लिए ही नहीं बल्कि सामाजिक वातावरण के लिहाज से भी महत्वपूर्ण है। जब संगठन में एकता होती है तब विकास सहजता से होता है। गाँव में एकता सुनिश्चित करने के लिए लोगों को प्रेरणा और मार्गदर्शन देते हुए उन्हें एक–दूसरे के करीब

लाने के प्रयास करना जरूरी है। यदि कुछ लोग छूट जाते हैं तो भविष्य में उनकी ओर से गड़बड़ी की आशंका हो सकती है।''

अपने गाँव के बाहर से नए विचारों को लाकर उन्हें वे अपने समुदाय के साथ जिस तरह जोड़ते हैं, निःसंदेह, यह लिम्बाराम की लीडरशिप की अनोखी खूबियों में से एक है। वे अनुभव प्राप्त करने के लिए पास के गाँवों में जाते हैं और वहाँ ऐसी नयी और अनोखी तकनिकों का जायजा लेते हैं जो समुदाय के विकास में मददगार हो सकती हैं। दूसरे स्थानों पर काम के लिए अपनाए जा रहे तरीकों पर गौर करके उन्हें अपने समुदाय में लागू करने की उनकी यह क्षमता बेमिसाल है। इसके अलावा, नयी सामुदायिक परियोजनाओं के शुरुआती प्रायोगिक दौर में वे खुद पर परीक्षण करने से पीछे नहीं हटते हैं।

उदाहरण के लिए, लिम्बाराम अपने गाँव में सिंचाई के लिए दो हॉर्सपॉवर का पंप लगाने वाले पहले व्यक्ति थे। उन्हें यह विचार पड़ोसी राज्य गुजरात में एक प्रशिक्षण यात्रा के दौरान सूझा। समुदाय में दो हॉर्सपॉवर का पंप आ जाने से गाँव में सिंचाई का काम बेहतर ढंग से होने लगा। इसका इतना अधिक प्रभाव हुआ कि आज कृष्णपुरा में लगभग पचास परिवार दो हॉर्सपॉवर के पंप का इस्तेमाल कर रहे हैं। लिम्बाराम गाँव में एक स्प्रिंकलर सिस्टम भी लेकर आए। उन्हें विश्वास है यह बहुत सफल साबित होगा। इससे कम पानी से कम मेहनत में ज्यादा जमीन की सिंचाई संभव होगी। इससे खेती के लिए भूमि भी अधिक मिलती है क्योंकि पानी रोकने के लिए मेढ़ बनाने की जरूरत नहीं होती। कम दीवारें होने से ना सिर्फ भूमि की अधिक सतह उपलब्ध होती है बल्कि फसल लगाने के लिए एक साथ अधिक भू–भाग उपलब्ध हो जाता है।

अलग–अलग जगहों से नई और प्रभावी सामुदायिक विकास परियोजनाएँ लाकर उन्हें लागू करने में समर्थ होना शायद अलग–अलग समूह के लोगों से संवाद करने की उनकी क्षमता का अभिन्न अंग है। किसानों को यह समझाना लिम्बाराम के लिए कोई मुश्किल काम नहीं है कि नयी सिंचाई प्रणाली लाभदायक होगी। हालाँकि, किसानों को यह समझाना जरूर मुश्किल था कि इसे खरीदने के लिए वे बैंक पर भरोसा करें। लिम्बा राम ने किसानों और बैंक मैनेजर की एक मीटिंग आयोजित की और अपनी स्वाभाविक संप्रेषण कुशलता का उपयोग करते हुए किसानों की चिंताओं (आशंकाओं) पर चर्चा करने में सफल

रहे। एक बार उनकी शंकाओं का समाधान हो जाने पर पर्याप्त ऋण लेकर स्प्रिंकलर सिस्टम लगाया गया।

रास्ते के महत्व, उसकी उपयोगिता और उससे क्या होना संभव है या संभव नहीं है यह अपनी–अपनी मान्यता और दृष्टिकोण का विषय बना रहेगा। उसका निर्माण करने वालों और उसका उपयोग करने वालों की इस बारे में बिल्कुल अलग–अलग राय हो सकती जिनमें परस्पर विरोधाभास और बहुत अधिक अंतर दिखाई दे सकता है। पीछे मुड़ कर देखने पर ही इसका महत्त्व और आशय समझा जा सकता है। हिंदुस्तान जिंक लिमिटेड के लिए उनके द्वारा किए गए कार्य के माध्यम से लिम्बा राम ने मुझे इन बातों पर सोचने के लिए मजबूर किया। यह एक खनन कंपनी है जो उनके समुदाय में काम करती है। इस इलाके के अनेक गाँव वालों की तरह कृष्णपुरा के निवासी भी रोजगार के लिए इस स्थानीय कंपनी पर निर्भर हैं।

लिम्बा राम ने मुझे बताया कि खदान उनके समुदाय के लिए लाभदायक है। इससे लोगों को रोजगार मिलता है। अपनी शिक्षा के लिए भी लिम्बा राम अंततः खदान को ही श्रेय देते हैं। हालाँकि, यह कहने के कुछ ही देर बाद वे दूर दिखाई दे रहे पहाड़ों की तरफ इशारा करते हुए मजाक में कहते हैं कि उस तरफ कोई भी नहीं जाता क्योंकि लोगों को डर लगता कि कहीं जमीन धँस ना जाए। उन्होंने आगे बताया कि किस तरह वन विभाग वहाँ एक ऐसे इलाके में वृक्ष लगा रहा है जिसके ठीक नीचे खनन कार्य किया गया था। लिम्बा राम, जो अब नहीं मुस्कुरा रहे थे, को यह फिक्र है कि एक दिन जंगल ही ना धँस जाए। उनके चेहरे के भाव देख कर मैं आश्चर्य में पड़ गया कि इन खदानों का होना इन समुदायों के लिए वाकई अच्छा है या बुरा। निश्चित ही खदान के अच्छे और बुरे दोनों पहलू हैं। भौतिक रास्ते की बदौलत ही दो हॉर्सपॉवर का पंप, स्प्रिंकलर सिस्टम और यहाँ तक कि सेवा मंदिर का लिम्बा राम के गाँव पहुँचना संभव हुआ, और उसी रास्ते की बदौलत यह खनन कंपनी भी आयी।

रास्ता क्या करता है? यह बिल्कुल स्पष्ट रूप (बारीकी) से जानने की इच्छा मन में हमेशा ही उठती रहेगीय भले ही इसका स्वरूप लगातार बदलता रहे जो इसकी एक मुख्य विशेषता हो सकती है। मेरा यह मानना है कि हमारी स्पष्ट रूप से यह जानने की इच्छा कि क्या चीज एक लीडर को लीडर बनाती है आने वाली कई पीढ़ियों तक निरंतर चलती रहने वाली एक खोज का विषय बना

रहेगा। हालाँकि, मैं यह कहूँगा कि यह प्रश्न कि "क्या चीज एक लीडर को लीडर बनाती है'' एक बड़े अनुसन्धान का महज एक भाग है। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं लीडरशिप को वस्तुनिष्ठ या उद्देश्य के स्तर पर समझने की कोशिश कर रहा हूँ, बल्कि यह है कि मेरी रूचि उन घटनाओं में है जिनमें लीडरशिप सकारात्मक और प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य करती है। इस अर्थ में, यह तर्क किया जा सकता है कि एक अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है, "हम किस तरह अच्छे लोगों को अच्छे लीडर बनने के लिए तैयार करते हैं?''

मानव जाति ने लीडरशिप की ढ़ेरों यादगार मिसालें देखी हैं। इनमें भयानक विनाशकारी और अविश्वसनीय रूप से सकारात्मक मिसालें शामिल हैं। मूलतः हम किसी लीडर द्वारा किए जाने वाले काम के आधार पर यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अमुक लीडर अच्छा है। इसलिए यह जरूरी है कि पहले हम व्यक्ति को कामों से अलग और कामों को लीडर की खूबियों से अलग करके देखें। ऐसी स्थिति में, कोई लीडर अच्छा है या नहीं यह संस्कृति या समुदाय की सोच पर निर्भर होगा कि उनकी नजर में किस कारण कोई व्यक्ति अच्छा कहलाता है। शायद एक रास्ते की तरह ही, जिसका महत्व इस बात से तय होता है कि उसका उपयोग कैसे जाता है, एक प्रभावी लीडर की खूबियों का महत्त्व भी इस बात से तय होता कि वह इन खूबियों को किस तरह उपयोग में लाता है। उदाहरण के लिए, हम गाँधी और हिटलर जैसी दो पूर्णतः विपरीत शख्सियतों को महान लीडर कैसे मान लेते हैं? दोनों बेहद शक्तिशाली या प्रभावी लीडर थे, फिर भी उन्होंने अपना–अपना जो रास्ता चुना और जो कार्य किए वे व्यक्तियों के रूप में उनकी अपनी–अपनी व्याख्या करते हैं।

यह संभव है कि स्वाभाविक लीडर कुदरती रास्तों की तरह खुद–ब–खुद उभर कर सामने आएँ, जैसे कि नदी मार्ग, घाटियाँ और भूमिगत गुफाएँ। साथ ही, उचित सहयोग और प्रयास के बल पर भी प्रत्येक व्यक्ति खुद में मौजूद लीडर को सतर्कतापूर्वक विकसित कर सकता है। हालाँकि, खुद में लीडरशिप कौशल उत्पन्न की सार्थकता सिर्फ उतनी ही होगी जितनी सार्थकता हमारे इस निर्णय की रहेगी कि हम उस कौशल का क्या उपयोग करेंगे।

जिस तरह मैं निरंतर यह विचार करता रहता हूँ कि एक समय अलग–थलग पड़े इन समुदायों, जो कि आज विकास की अनिश्चितताओं का सामना कर रहे हैं, को जोड़ने वाले रास्तों का क्या प्रभाव होगा, उसी तरह मेरे

मन में यह सवाल भी आता है कि कैसे और कहाँ अच्छे लीडर्स विकसित किए जाएँगे। मेरा मत है कि सेवा मंदिर एक बेहतरीन संगठन है, जो इसी तरह कार्य करता रहेगा तो बेहतरीन लीडर भी विकसित करता रहेगा।हालाँकि, सेवा मंदिर एक बहुत बड़े समुद्र में सिर्फ एक मछली के समान है। सिर्फ किसानों ने ही रास्ते के निर्माण के परिणामस्वरूप अपनी खेती की जमीन त्यागी या खोयी है। मैं पहाड़ों के पीछे रहने वाले उन समुदायों के बारे सोचता हूँ जो इतने दूर हैं की लोगों की नजरें उन्हें नहीं देख पाती, लेकिन उतने दूर भी नहीं कि उन तक पहुँचा ना जा सके। क्या किसी ने उनसे इस बारे में बात की है? कोटडा के एक किसान के लिए यह बात क्या मायने रखती है कि अब वह कंक्रीट की एक गरजती लहर से सिर्फ एक पत्थर फेंकने जितनी दूरी पर है जो उसे कोलकाता तक ले जा सकती है? मैं मन ही मन सोचता हूँ कि यह रास्ता किस तरह के अवसर ला सकता है, और साथ ही यह भी सोचता हूँ कि उसके साथ कौन–कौन से खतरे भी आएँगे।

मुझे नहीं लगता कि यह महज एक रास्ता है। मुझे नहीं लगता कि यह लोगों को सिर्फ एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का ही काम करता है। जिन लोगों के जीवन को यह प्रभावित करता है उनके लिए इसके मायने सिर्फ सुविधा नहीं बल्कि इससे कही अधिक हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह जितनी स्वतंत्रता प्रदान करता है उतना ही प्रतिबंधित भी करता है, यह जितना एक उपहार है उतना ही एक अभिशाप भी। हम कभी पूरी तरह यह नहीं जान सकते कि वास्तव में लीडरशिप क्या है। हालाँकि, सेवा मंदिर ने हमें जो समझाने कोशिश की है वह है जीने और काम करने के तरीकों में स्वतंत्र और सार्थक विकल्पों के चुनाव का महत्व। इस किताब में जिनका जिक्र है उन्होंने कहा है कि वे एक अनिश्चितता भरे भविष्य के मूक दर्शक बनने के स्थान पर उस भविष्य के निर्माण के सक्रिय कारक (घटक) बनना पसंद करेंगे जो वे चाहते हैं। यह लीडर्स सिर्फ अपने समुदायों के लिए ही नहीं बल्कि सारी दुनिया के लोगों के लिए भी प्रेरणा और अंतर्दृष्टि के स्रोत हैं। वे हमें याद दिलाते हैं कि कोई भी व्यक्ति एक लीडर बन सकता है।

मैं यहाँ एक छोटी सी कहानी बताते हुए अपनी बात समाप्त करना चाहूँगा जिसने इस यात्रा के दौरान मेरे अंतर्मन को छू लिया। एक दिन जब मैं उदयपुर में दृष्टिबाधितों के स्कूल में काम कर रहा था, मेरी नजर श्रवणबाधितों के स्कूल (मैं वहाँ भी स्वैच्छिक कार्य करता था) के एक छात्र पर पड़ी। अपने

साथियों से मिलने वह सड़क पार आ गया था। मैंने देखा उसने एक दृष्टिबाधित छात्र हाथ पकड़ रखा था और उसकी सहायता कर रहा था। यह देख कर पहले तो मुझे कौतूहल महसूस हुआ क्योंकि दृष्टिबाधित छात्र श्रवणबाधित छात्र से "बात" कर रहा था जबकि श्रवणबाधित छात्र उसे आसपास की चीजें "दिखाता" नजर आ रहा था। इस दृश्य ने मेरा मन मोह लिया और मैं मन ही मन सोचने लगा कि क्या आदर्श साझेदारी है, क्या आदर्श साझेदारी है ! उनका एक–दूसरे का हाथ थामे एक तंग गलियारे से गुजरने का दृश्य आज भी मेरी आँखों के सामने घूम जाता है। उनकी आकृतियाँ मेरे मन पर सदा के लिए अंकित हो गयी हैं। मेरे लिए लीडरशिप की इससे बेहतर तस्वीर की कल्पना करना संभव नहीं है।

यह सेवा मंदिर द्वारा प्रदान की जाने वाली लीडरशिप के समान है, जरूरत के वक्त वे लोगों को चुनते हैं, उनकी स्वाभाविक खूबियों और प्रतिभाओं को पोषित करते हैं और अंततः उन्हें उनकी खुद की उम्मीदों से भी ज्यादा क्षमता हासिल करने में मदद करते हैं।

"हिन्द स्वराज में गाँधी जी ने लिखा है 'जिनके हक में हम आवाज उठाते हैं उन्हें हम जानते नहीं, ना ही वे हमें जानते हैं'। प्रोफेशनल्स और जिनके लिए यह प्रोफेशनल्स काम करते हैं के बीच यह 'नहीं जानने' की खाई सर्व–विदित है लेकिन इसे पाटने के सामाजिक प्रयास यदाकदा ही हुए हैं। अब तक, कभी–कभार खुद से और उनसे जुड़े, जिनकी उन्हें फिक्र है, सत्य को खोजने और उसका सामना करने के जुनून में कुछ युवक वास्तविकता के उस समंदर में गहरे उतरे हैं जो अपने में अत्यधिक उग्रता, पीड़ा और अति उत्साह समेटे हुए होता है, और इसमें से वे ज्ञान के बिरले मोती लेकर उभरे हैं। सिल्वर फोडर, फिरोज अर्दलान द्वारा दक्षिण राजस्थान में स्थानीय सामुदायों के लीडर्स के साथ अपनी बातचीत का प्रथम पुरुष में लिखा गया वर्णन, एक व्यक्ति की ऐसी ही साहसिक यात्रा का साक्ष्य है।''

किशोर संत

किशोर संत उदयपुर के एक विकास कार्यकर्ता हैं। उन्हें स्वैच्छिक क्षेत्र में कार्य का पैंतीस वर्षों से अधिक का अनुभव है और वे गाँधीवादी विचारधारा के अनुयायी हैं।

"सिल्वर फोडर'' हमें नागरिक पहल और अपने समुदाय में निरंतर उम्मीद बनाए रखने के महत्व से अवगत कराती है। ग्रामीण भारत पर एक क्रैश कोर्स (अल्पावधि पाठ्यक्रम) समान यह पुस्तक, ऐसे किसी भी व्यक्ति के लिए एक आदर्श आरंभिक बिंदु है जो निर्धन समुदायों के मूलभूत ढाँचे और आजीविकाओं के बारे में खुद को शिक्षित करना चाहता हो। राजस्थान में लीडर्स के गहन अवलोकन के साथ बीच बीच में भारत में गाड़ी चलाना सीखने की अपनी खुद की कहानी बताते हुए फिजी हमें एक ऐसी यात्रा पर ले जाते हैं जो गाड़ी चलाने के उनके अनुभव की तरह रुकावटों से होकर गुजरने के परिणामस्वरूप अधिक से अधिक प्रेरक होती चली जाती है।''

राशेल कॉडर नेलबफ

राशेल कॉडर नेलबफ येल में कला का अध्ययन कर रही एक स्नातक छात्रा हैं। उन्होंने "माय लिटिल रेड बुक'' शीर्षक से एक पुस्तक लिखी है और सेवा मंदिर के साथ स्वैच्छिक कार्य भी किया है।

लेखक परिचय

फिरोज अर्दलान

फिरोज अर्दलान (फिजी) का जन्म वॉशिंगटन डीसी में सन 1984 ईरानी मूल के माता–पिता के यहाँ हुआ। उनका लालन–पालन इंग्लैंड में और शिक्षा फ्लोरेंस तथा न्यूयॉर्क में हुई। न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी से उन्होंने सन 2007 में दर्शनशास्त्र में स्नातक उपाधि प्राप्त की।

यात्रा करने और दूसरों की मदद करने के उनके जूनून ने उन्हें 2009 में सेवा मंदिर पहुँचाया जहाँ उन्होंने डेढ़ वर्ष कार्य किया। फिजी ने 'ए लायन एंड ए व्हेल कैन डांस' शीर्षक से भी एक पुस्तक लिख कर 2012 में बच्चों के लिए प्रभावशाली बुक ऐप का निर्माण किया जो आईट्यून्स पर उपलब है। वर्तमान में वे न्यूयॉर्क में रह कर कार्य कर रहे हैं। अपने खाली वक्त में वे गिटार बजाने और और संगीत की धुन तैयार करने का शौक रखते हैं।